रश्मि प्रकाशन

एशिया के ज्योतिपुंज

गुरु गोरखनाथ

(योग के उत्थान और हिन्दी के विकास में
भगवान गोरखनाथ का योगदान)

एशिया के ज्योतिपुंज
गुरु गोरखनाथ

राम सागर शुक्ल

रश्मि प्रकाशन
रश्मि प्रकाशन
204, सनशाइन अपार्टमेंट,
बी-3, बी-4, कृष्णा नगर, लखनऊ-226023
मोबाइल : 08756219902, ईमेल : rashmiprakashan2017@gmail.com

एशिया के ज्योतिपुंज : गुरु गोरखनाथ

© : राम सागर शुक्ल
पहला संस्करण : 2018
दूसरी आवृति : 2019
सहयोग राशि : 150 रुपये
ISBN : 978-93-87773-23-3

प्रकाशक
रश्मि प्रकाशन
204, सनशाइन अपार्टमेंट,
बी-3, बी-4, कृष्णा नगर, लखनऊ-226023

मुद्रक
आशी प्रिंटर्स, लखनऊ

Esiya ke Jyotipunj : Guru Gorakhanath
by Ram Sagar Shukla

इस पुस्तक के सर्वाधिकार सुरक्षित हैं। प्रकाशक/लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश की फोटोकॉपी एवं रिकॉर्डिंग सहित इलेक्ट्रॉनिक अथवा मशीनी, किसी भी माध्यम से अथवा ज्ञान के संग्रहण एवं पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा, किसी भी रूप में, पुनरुत्पादित अथवा संचारित-प्रसारित नहीं किया जा सकता।

समर्पित है यह पुस्तक,
स्मृति-शेष पिता-तुल्य अग्रज,
देवारण्य क्षेत्र के,
हिन्दी और संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित
लाल वचन शुक्ल को,
जिन्होंने बचपन में ही
श्रीमदभगवद्गीता की
अंग्रेजी अनुवाद सहित
एक प्रति देकर,
मुझे भारतीय दर्शन की दुनिया का
द्वार दिखाया।

अनुक्रम

प्रस्तावना	9
लोकभाषा हिन्दी के आदिकवि गुरु गोरखनाथ	15
भगवद्गीता और भगवान गोरखनाथ	22
हिन्दू ध्यावै देहुरा, मुसलमान मसीत	30
गोरख जगायो जोग	36
अलख निरंजन	49
गोरखनाथ की उलटबांसियाँ	62
गोरखधन्धा	70
गोरख वचनावली	74
परिशिष्ट-1	90
परिशिष्ट-2	91
परिशिष्ट-3	93

उत्तर प्रदेश के यशस्वी मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ का आशीर्वचन

संख्या- औG 547 /सीएम-1/2018

योगी आदित्यनाथ

मुख्य मंत्री
उत्तर प्रदेश

प्रिय श्री राम सागर शुक्ल जी,

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता की अनुभूति हो रही है कि आपके द्वारा 'एशिया के ज्योतिपुञ्ज गुरु गोरखनाथ' पुस्तक की रचना की गई है।

शिवावतार महायोगी गुरु गोरखनाथ एक महान सिद्ध पुरुष होने के साथ–साथ समाज सुधारक भी थे। उन्होंने सदैव सामाजिक कुरीतियों और धार्मिक आडम्बरों का विरोध किया था। साक्षात् शिवस्वरूप होने के बावजूद गुरु गोरखनाथ जी ने लोक मर्यादा के लिए योग साधना और तपस्या में तत्पर होकर जनमानस में योग ज्ञान के प्रति प्रगाढ़ अभिरुचि उत्पन्न की थी।

परमात्मा से साक्षात्कार के सम्बन्ध में गुरु गोरखनाथ जी का कथन है कि 'मैंने पिण्ड में समस्त ब्रह्माण्ड का अनुसंधान कर महायोगसिद्धि का रहस्य जान लिया है॥ देव, देवालय, तीर्थ आदि इसी शरीर में हैं। मैंने शरीर के भीतर अविनाशी परमात्मा, अलख निरंजन की अनुभूति प्राप्त कर ली'। समाज सुधार के अपने संकल्प तथा आमजन के आध्यात्मिक उन्नयन के दृष्टिगत, गुरू गोरखनाथ जी ने संस्कृत और लोकभाषा में योगपरक साहित्य का सृजन किया। उनके द्वारा रचित गोरक्षकल्प, गोरक्षसंहिता, गोरक्षशतक, गोरक्षगीता, योगमार्तण्ड आदि कृतियां हमारे साहित्य की अमूल्य धरोहर हैं। गोरखबानी में संकलित सबदी तथा पद लोगों का मार्गदर्शन करते हैं।

गुरु गोरखनाथ जी ने समय–समय पर भारत के विभिन्न स्थानों में तपस्या और योग साधना की। उत्तर प्रदेश, उत्तराखण्ड, गुजरात, पंजाब, बंगाल, कर्नाटक सहित विभिन्न प्रदेशों में उनके तपोस्थल विद्यमान हैं। महायोगी गोरखनाथ जी ने त्रेतायुग में भगवती राप्ती के तट पर गोरखपुर में तपस्या की थी। यह नगर गुरु गोरखनाथ जी की पुण्यस्मृति में उन्हीं के नाम से विख्यात है।

महायोगी गोरखनाथ जी की त्रेतायुगीन तपोस्थली का भव्य स्मारक श्री गोरखनाथ मन्दिर नाथ पन्थ के योगियों एवं अनुयायियों की आस्था का सर्वोच्च केन्द्र है। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही श्री गोरखनाथ मन्दिर धर्म–अध्यात्म–योग केन्द्र के साथ–साथ स्वाधीनता संग्राम का भी केन्द्र बनते हुए राष्ट्रीय–सामाजिक सरोकारों से सीधा जुड़ गया।

महायोगी गुरु गोरखनाथ जैसी दिव्य विभूति पर पुस्तक का सृजन कर आपने एक पुनीत कार्य किया है। इसके लिए मैं आपको साधुवाद ज्ञापित करता हूं। मुझे आशा है कि यह पुस्तक युवा पीढ़ी के लिए विशेष रूप से प्रेरणादायी सिद्ध होगी।

शुभकामनाओं सहित,

आपका,

(योगी आदित्यनाथ)

श्री राम सागर शुक्ल,
'अपर महानिदेशक समाचार' (सेवानिवृत्त)
प्रसार भारती,
137, विकासखण्ड, गोमती नगर, लखनऊ।

लाल बहादुर शास्त्री भवन, लखनऊ

प्रस्तावना

भारतीय धर्म साधना के इतिहास में गुरु गोरखनाथ के नाथ सम्प्रदाय का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। प्रख्यात विद्वान आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने ग्रंथ 'नाथ सम्प्रदाय' की भूमिका में लिखा है– *''भक्ति आन्दोलन के पूर्व यह (नाथ सम्प्रदाय) सर्वाधिक महत्वपूर्ण धार्मिक आन्दोलन रहा है और बाद में भी शक्तिशाली रहा है। आधुनिक भारतीय भाषाओं में से प्रायः सबके साहित्यिक प्रयत्नों की पृष्ठभूमि में इसका प्रभाव सक्रिय रहा है। आधुनिक भारतीय भाषाओं के साहित्य की प्रेरक शक्तियों का अध्ययन नाथ सम्प्रदाय के अध्ययन के बिना अधूरा ही रह जाएगा।''*

दार्शनिक ग्रंथों में नाथ सम्प्रदाय के अनेक नामों का उल्लेख मिलता है। विभिन्न ग्रंथों में इसे सिद्ध मत, योग मार्ग, अवधूत मत, अवधूत सम्प्रदाय आदि नामों से निरूपित किया गया है। नाथ सम्प्रदाय के प्रणेता आदिनाथ को माना जाता है, वही गोरखनाथ है, वही शिव है। ब्रह्मानन्द ने अपने ग्रंथ 'हठयोग प्रदीपिका' की टीका में लिखा– *''आदिनाथ : सर्वेषाम् नाथानाम प्रथमः, ततो नाथसम्प्रदायः प्रवृत्तः इति नाथ सम्प्रदायिनो वदन्ति।''*

गुरु गोरखनाथ का आविर्भाव विक्रम की दसवीं शताब्दी में माना जाता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार शंकाराचार्य के बाद इतना प्रभावशाली और इतना महिमान्वित महापुरुष भारत वर्ष में दूसरा नहीं हुआ। भारत वर्ष के कोने-कोने में गुरु गोरखनाथ के अनुयायी आज भी पाये जाते हैं। इतना ही नहीं, पड़ोसी देश पाकिस्तान, अफगानिस्तान, नेपाल, तिब्बत, म्यांमार, श्रीलंका और अन्य देशों में भी नाथ सम्प्रदाय और गोरखनाथ के अनुयायी भारी संख्या में आज भी पाये जाते हैं।

भक्ति आन्दोलन के पूर्व सबसे शक्तिशाली धार्मिक आन्दोलन गोरखनाथ का 'योग मार्ग' ही था। भारत वर्ष की ऐसी कोई भाषा नहीं, जिसमें गोरखनाथ की कहानी नहीं पायी जाती है। गोरखनाथ अपने युग के सबसे बड़े धार्मिक और सामाजिक नेता थे, उन्होंने जिस धातु को छुआ, वही सोना हो गया।

सच बात तो यह है कि गोरखनाथ स्वयं एक आन्दोलन थे। जिन परिस्थितियों में उनका आविर्भाव हुआ, वह समय भारत में धार्मिक दृष्टि से पराभाव का समय था। योग साधना के नाम पर तंत्र साधना और तामसिक प्रवृत्तियाँ हावी थीं। इससे समाज में भ्रम फैला हुआ था। ऐसी परिस्थिति में गोरखनाथ ने सभी सम्प्रदायों को मिलाकर सात्विक वृत्तिवाला सिद्धान्त दिया। वे संस्कृत के प्रकांड विद्वान थे। उन्होंने 'योग मार्ग' से सम्बन्धित कई रचनाएं संस्कृत में की है। उस समय पढ़े-लिखे लोगों की भाषा संस्कृत ही थी, परन्तु जैसा कि कहा गया है कि गोरखनाथ एक युग पुरुष थे। उन्होंने अपनी बात आम जनता तक पहुँचाने के लिए लोक भाषा का सहारा लिया। गोरखनाथ ने हिन्दी में भी अपनी रचनाएं की और योग का संदेश आम आदमी तक पहुँचाया। गुरु गोरखनाथ का यह सबसे बड़ा योगदान था। गीता में श्रीकृष्ण ने कहा कि राजर्षियों को योग का ज्ञान पिता-पुत्र की परम्परा से मिलता रहा है। कई बार यह लुप्त भी हो गया, परन्तु इसका आम आदमी से कोई सम्बन्ध नहीं था। लेकिन गोरखनाथ ने पहली बार योग जैसी कठिन साधना को आम आदमी तक पहुँचाया। इसलिए उन्होंने आम लोगों की भाषा में भी रचनाएं की। गोरखनाथ की हिन्दी में सबसे प्रसिद्ध रचना 'सबदी' है, इसका काफी महत्व है। गोरखनाथ का प्रार्दुभाव हिन्दी साहित्य के इतिहास के अनुसार आदिकाल या वीरगाथा काल में हुआ। उस समय हिन्दी भाषा गर्भावस्था में थी। फिर भी गोरखनाथ का व्यक्तित्व इतना विशाल और प्रभावशाली था कि उनके सैकड़ों साल बाद भक्ति काल के कवियों पर उनका प्रभाव देखा जाता है।

मध्यकालीन भक्ति साधना युग के संत कवियों कबीरदास, रैदास, मीरा यहाँ तक कि तुलसीदास पर भी गोरखनाथ का प्रभाव दिखाई देता है। कबीरदास अपनी उलटबांसियों के लिए लोक जीवन में प्रसिद्ध हैं। उनकी एक उलटबांसी है–

कबीरदास की उलटी बानी, बरसै कम्बल, भीजै पानी।

बहुत कम लोगों को पता होगा कि इसी प्रकार की उलटबांसी की रचना बहुत पहले गोरखनाथ ने की थी।

नाथ बोले अमृत वाणी, वरिशैगी कबली, भीजैगा पाणी। ***(पद-47)***

कबीरदास ने इस्लाम और हिन्दू धर्मों के आडम्बरों की कड़ी आलोचना की है। इसकी प्रेरणा भी उन्हें निश्चित रूप से गोरखनाथ से मिली होगी। गोरखनाथ की यह रचना–

हिन्दू ध्यावै देहुरा,
मुसलमान मसीत।
योगी ध्यावै परमपद,
जहां देहुरा न मसीत।
हिन्दू आषै राम को, मुसलमान खुदाई,
जोगी आषै अलख हो,
तहां राम अछैय न खुदाई।

कबीरदास के समय तक भारत में इस्लाम ने अपनी जड़ें जमा ली थीं। इस बीच कई ऐसे मुसलमान शासक हुए, जिन्होंने दोनों सम्प्रदायों के बीच सद्भाव पैदा करने की कोशिश की। ऐसी परिस्थिति में इस्लाम की आलोचना करना उतना जोखिम भरा नहीं था, परन्तु गोरखनाथ के समय में इस्लाम की आलोचना करना आसान नहीं था। वह खिलजी शासकों का दौर था। यह वह समय था, जब नालन्दा और विक्रमशिला के विहारों को गिराया जा रहा था और पुस्तकालयों में आग लगाई जा रही थी। विहारों में रहने वाले योगी और सिद्ध जंगलों की ओर पलायन कर गये थे। ऐसी परिस्थिति में गोरखनाथ ने इस्लाम और हिन्दू धर्म के आडम्बरों की खुल कर आलोचना की। यह कार्य केवल गोरखनाथ जैसा महापुरुष ही कर सकता था। गोरखनाथ ने इस्लाम की कभी आलोचना नहीं की। उन्होंने केवल आडम्बर की आलोचना की।

भक्तिकाल के दूसरे संत कवि हैं रविदास। उनकी एक कविता भी काफी लोकप्रिय है–

मन चंगा तो कठौती में गंगा।

इस कविता की भी रचना सबसे पहले गोरखनाथ ने की थी। देखिये उनकी सबदी-153

अवधू मन चंगा तो कठौती ही गंगा।
वांध्या मेल्हा तो जगत चेला।
वदंत गोरख सति सरूप।
तन विचारै ते रेख न रूप।

भक्ति काल के कवियों पर गोरख नाथ की रचनाओं का स्पष्ट प्रभाव दिखाई

देता है। मीराबाई और अन्य लोगों ने भी गोरखनाथ की साहित्यिक रचना को आधार बनाकर अपने पदों की रचना की। परन्तु आश्चर्य की बात यह है कि हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों ने गोरखनाथ को साहित्य के इतिहास में पर्याप्त स्थान नहीं दिया। इतना ही नहीं कबीरदास, रैदास, मीरा और तुलसीदास के पदों की पढ़ाई तो शिक्षण संस्थाओं में होती है, परन्तु गोरखनाथ का कोई पद नहीं पढ़ाया जाता है। यह बात समझ में नहीं आती है। अब समय आ गया है कि गोरखनाथ के व्यक्तित्व और कृतित्व का सही मूल्यांकन किया जाना चाहिए।

गोरखनाथ और नाथ सम्प्रदाय के बारे में अनगिनत किंवदन्तियाँ है। परन्तु उनमें कोई तालमेल नहीं है। वे बेसिर-पैर की हैं। इसलिए उन पर ध्यान नहीं दिया जाना चाहिए। इस पुस्तक में केवल स्थापित तथ्यों तथा गोरखनाथ के उपलब्ध साहित्य को आधार बनाया गया है। गोरखनाथ के योग की तुलना गीता से शायद पहली बार की गयी है। मध्यकालीन संत कवियों के साहित्य पर गोरखनाथ के प्रभाव को जानने की कोशिश पहली बार की गयी है।

गोरखनाथ क्रांतिकारी और निर्भीक समाज सुधारक थे। उन्होंने टोना-टोटका, झाड़-फूँक और जड़ी बूटियों पर निर्भर रहने की भी कड़ी आलोचना की। इस संबंध में उनकी रचना आत्मबोध का दूसरा पद उल्लेखनीय है।

गोरखनाथ को शरीर विज्ञान का जितना गहरा और वैज्ञानिक ज्ञान था, उसे देखकर आश्चर्य होता है। शरीर विज्ञान के बारे में उन्होंने जो जानकारी अपनी रचनाओं में दी है, उसी प्रकार की जानकारी आधुनिक विज्ञान ने दी है।

योगी हुकुम सिंह तंवर ने अपनी पुस्तक 'नाथ सम्प्रदाय' में गोरखनाथ द्वारा प्रतिपादित योग की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए कहा, ''पतंजलि योग जहाँ सिद्धान्तपरक ज्ञान है, वहीं योगी गोरखनाथ का योग व्यावहारिक अधिक है। इसी कारण पतंजलि योग वेदों की तरह ग्रंथों का एक आभूषण मात्र बन कर रह गया, जो यदा-कदा साहित्यिक गोष्ठियों में प्रयोग से अधिक उपयोगी नहीं बन पाया है, जबकि योगी गोरखनाथ द्वारा बताया गया योग मार्ग नित्य उपयोग में आने वाले परिधानों की भांति जीवन की एक आवश्यकता बन गया। गोरखनाथ द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों में एक ओर तो ईश्वरवाद की प्रतिष्ठा है, तो दूसरी ओर कौल मार्ग और ब्रजयानी साधना से उत्पन्न विकृतियों के प्रति विरोध का स्वर प्रमुख है। इसीलिए योगी गोरखनाथ द्वारा प्रवर्तित नाथ पंथ में व्यक्तिनिष्ठ इन्द्रिय संयम के साथ समाजोन्मुखी नैतिकता पर विशेष बल दिखाई देता है।'

गोरखनाथ ने वामाचारी तांत्रिक साधना का परिष्कार करते हुए एक ऐसी साधना पद्धति को जन्म दिया, जो प्रत्येक उस व्यक्ति के लिए साधना का मार्ग खोल देता है, जो वास्तव में आत्मकल्याण चाहता है। यह सच है कि शंकराचार्य ने तर्क से बौद्ध दार्शनिकों को निरुत्तर कर दिया था, परन्तु जनमानस में वर्षों से अपनी पैठ

बनाने वाले बौद्धों का प्रभाव समाप्त नहीं हो सका था। यह कार्य गुरु गोरखनाथ ने किया।

डॉ. अनुज प्रताप सिंह ने अपनी पुस्तक 'गोरखनाथ और नाथ सिद्ध' में पृष्ठ-174 पर कहा है कि परम्पराओं और साम्प्रदायिक ग्रंथों के अवलोकन से ज्ञात होता है कि गोरखनाथ ने बौद्धों की चित्त और मन की साधना, योग शास्त्र की परम्परा से काया साधना, शैवागम से द्वैताद्वैत विलक्षण परम सत्ता की उपासना, वैष्णव धर्म से सात्विकता को लेकर अपने सम्प्रदाय को संगठित किया, जिसको विद्वानों ने कई नाम दिये। चूँकि गोरखनाथ के गुरु मछिन्दर नाथ वाममार्गीकौल साधक थे, इसलिए लोग गोरखनाथ को भी इससे जुड़ा हुआ मानते हैं। परन्तु जैसा कि गोरखनाथ का साहित्य और उनके कार्यकलाप देखने से सिद्ध होता है कि उन्होंने वामाचार और कौलाचार को तिलांजलि दे दी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि गोरखनाथ का व्यक्तित्व एक प्रखर समाजसेवी, तेजस्वी धार्मिक नेता और ओजस्वी साहित्यकार का व्यक्तित्व लगता है। इसके बावजूद हिन्दी साहित्य के इतिहास और भारतीय इतिहास में उनकी उपेक्षा की गयी। अब समय आ गया है कि उनके व्यक्तित्व का आंकलन उनके कार्यों और उनके उपलब्ध साहित्य के आधार पर किया जाना चाहिए। अगर कबीर, रैदास, मीरा, तुलसीदास और अन्य संत कवियों की रचनाओं को शिक्षा के पाठ्यक्रम में रखा जा सकता है, तो इन सब संत कवियों पर अमिट छाप छोड़ने वाले गोरखनाथ की रचनाओं को भी युवाओं को पढ़ने का अवसर दिया जाना चाहिए।

इस पुस्तक की रचना में बाराबंकी के पत्रकार फ़ज़ल इमाम और लखनऊ आकाशवाणी समाचार के शरद मिश्र ने पर्याप्त सहयोग दिया। इसके लिए उनके प्रति आभार प्रकट करता हूँ। रश्मि प्रकाशन के हरे प्रकाश जी को साधुवाद है, जिन्होंने बहुत ही कम समय में पुस्तक प्रकाशित कर दी।

राम सागर शुक्ल

लोक भाषा हिन्दी के आदि कवि गुरु गोरखनाथ

गुरु गोरखनाथ के जन्म और उनके समय के बारे में विद्वान एक मत नहीं हैं। उनके बारे में जो कथाएं और किवंदन्तियां प्रचलित हैं, उससे प्रतीत होता है कि वे आश्चर्यजनक शक्तियों के स्वामी थे। योगी हुकुम सिंह तंवर ने अपनी पुस्तक 'नाथ सम्प्रदाय' (पृष्ठ-129) में लिखा है कि गोरखनाथ ने वामाचारी तांत्रिक साधना का परिष्कार करते हुए एक ऐसी साधना पद्धति को जन्म दिया, जो प्रत्येक उस व्यक्ति के लिए साधना का मार्ग खोल देती है, जो वास्तव में आत्मकल्याण करना चाहता है। जाति व धर्म के बन्धनों से रहित सर्व समभाव या विश्वजनीन दृष्टि को पनपाने वाली यह नाथ साधना पद्धति गोरखनाथ के समय से नाथ संप्रदाय की संज्ञा के साथ नये रूप में अस्तित्व में आयी।

गोरखनाथ के समय के बारे में भी विद्वान एकमत नहीं हैं। डॉ. नागेन्द्रनाथ उपाध्याय का कथन है कि यह कहना एकांगी है कि बौद्ध मत का उच्छेद कुमारिल भट्ट और शंकराचार्य ने किया। शंकराचार्य ने यद्यपि शास्त्र और तर्क की सहायता से बौद्धों को निरुत्तर कर दिया था, किन्तु भारतीय जनमानस में जन्मे बौद्ध प्रभाव को वे मिटा नहीं सके थे। यह कार्य गोरखनाथ ने किया। गोरखनाथ की रचना 'सबदी' में एक पद है–

अवधू काया हमारी नालि बोलिए दारू बोलिए पवनं।
अगनि पलीता अहद गरजै व्यंद गोला उड़ि गगनं।

कुछ लोगों का कहना है कि उपरोक्त 'सबदी' में तोप, गोला और बारूद का उल्लेख है। तो गोरखनाथ उसी काल में पैदा हुए थे, जब तोप और गोला का आविष्कार हो गया था। इतिहासकारों के अनुसार सबसे पहले मुगल सम्राट बाबर ने तोप का प्रयोग युद्ध में किया था। अतः गोरखनाथ का समय बाबर के बाद हुआ। जो भी हो, यह विवाद का विषय है। यह अनुमान सही नहीं लगता है। 'सबदी' में केवल पलीता और गोला शब्द का प्रयोग किया गया है, जो बहुत पहले से प्रयोग में था।

आश्चर्य इस बात पर होता है कि गोरखनाथ जैसे महापुरुष, जिन्होंने हिन्दी भाषा को अपने साहित्य से समृद्ध किया, उनका नाम हिन्दी साहित्य का इतिहास लिखने वालों ने भुला दिया। हिन्दी साहित्य का पहला इतिहास लिखने वाले गांसा द तासी ने अपनी पुस्तक 'हिन्दुई साहित्य का इतिहास' में गोरखनाथ का उल्लेख नहीं किया। ग्रियर्सन और शिव सिंह सेंगर ने भी कोई ज़िक्र नहीं किया। सबसे पहले मिश्र बन्धुओं ने गोरखनाथ के बारे में कुछ सूचनाएं दीं। इसके बाद 1929 में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने उपलब्ध तथ्यों के आधार पर कुछ कहने का प्रयास किया। उन्होंने गोरखनाथ के साहित्य के बारे में कुछ ख़ास नहीं कहा, क्योंकि उस समय तक नाथों का साहित्य उपलब्ध नहीं था। सबसे पहले डॉ. पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल ने गोरखनाथ की कुछ रचनाओं को सबके सामने प्रस्तुत किया। भारत की अन्य भाषाओं में भी गोरखनाथ का उल्लेख मिलता है। हिन्दी साहित्य जगत में गोरखनाथ और सिद्धों के बारे में राहुल सांकृत्यायन ने महत्वपूर्ण कार्य किया। इसके बाद पं. परशुराम चतुर्वेदी, शान्ति प्रसाद चन्दोला, डॉ. रांगेय राघव, डॉ. धर्मवीर भारती, डॉ. वेद प्रकाश जुनेजा, डॉ. दिवाकर पाण्डेय, डॉ. नागेन्द्रनाथ उपाध्याय और योगी हुकुम सिंह तंवर तथा डॉ. अनुज प्रसाद सिंह गोरखनाथ के बारे में विपुल सामग्री प्रकाश में लाये।

गोखनाथ के जन्म स्थान के बारे में भी कई कथाएं हैं। डॉ. धर्मवीर भारती ने अपनी पुस्तक 'सिद्ध साहित्य' में लिखा- *''गोरखनाथ की भाषा से प्रतीत होता है कि वे उत्तर-पश्चिम भारत के रहने वाले थे। रावलपिण्डी जिले की गुजर खां तहसील के गोरखुपर गाँव को उनका जन्म स्थान बताया जाता है। झेलम जिले में गोरखनाथ का टीला, पेशावर में गोरखहट्टी और बलूचिस्तान की लासबेला रियासत में गोरख की धूंही से भी उनका सम्बन्ध बताया जाता है। परन्तु यह मत भी प्रमाणिक नहीं लगता है।''*

लोगों की मान्यता है कि गोरखनाथ जी त्रेता में गोरखपुर में प्रगट हुए थे। उस समय गोरखपुर का नाम रामगढ़ था, जो गोरखनाथ के आर्विभाव के बाद गोरखपुर हो गया। इसका प्रमाण यह है कि गोरखपुर शहर में रामगढ़ ताल अभी भी विद्यमान है। ऐसी मान्यता है कि भगवान राम ने गोरखपुर में गोरखनाथ से, जो शिव के अवतार माने जाते हैं, योग विद्या का ज्ञान प्राप्त किया था।

गोरखनाथ की रचनाओं के आधार पर उनका स्थान पश्चिमी भारत माना जाता है, परन्तु नेपाल अपने को गोरखा राज्य कहकर गौरवान्वित समझता है। भारतीय सेना में गोरखा रेजीमेन्ट भी है। नेपाल में मछिन्दरनाथ की आज भी पूजा की जाती है परन्तु नेपाल को भी गोरखनाथ का जन्म स्थान नहीं माना जा सकता। मैं जिन दिनों काठमाण्डू में था, मैंने वहाँ देखा, प्रति वर्ष योगी मछिन्दरनाथ का जुलूस उत्साह से निकाला जाता है। शैव साहित्य के अनुसार गोरख का जन्म स्थान कर्नाटक के बादामी तालुका का पट्टदकमल नामक गाँव है। मैं समझता हूँ कि गोरखनाथ का जन्म स्थान ढूँढ़ना व्यर्थ का प्रयास है। क्योंकि उनका जन्म हुआ ही नहीं था। विभिन्न कालों में धर्म की रक्षा के लिए उनका

प्रादुर्भाव हुआ। एक 'सबदी' में उन्होंने स्वयं कहा कि वे जन्म-मृत्यु के चक्र से परे हैं। कुछ लोगों का यह कथन सही लगता है कि त्रेता युग में श्रीरामचन्द्र ने उनसे योग सम्बन्धी उपदेश ग्रहण किया था। गोरखनाथ व्यास, हनुमान आदि की तरह अमर हैं। आज भी वे सूक्ष्म शरीर से लोक कल्याण के लिए नाना स्थानों पर विचरण करते रहते हैं। आज भी नाथ योगी मानते हैं कि दीक्षा के दिन गोरखनाथ उन्हें अवश्य दर्शन देते हैं। फिर भी डॉ. अनुज प्रताप सिंह ने अपनी पुस्तक 'गोरक्षनाथ और नाथसिद्ध' में यह निष्कर्ष निकाला है कि गोरखनाथ का जन्म काल शंकराचार्य के बाद और रामानुजाचार्य के पहले हुआ होगा। गोरखनाथ जी ने अपने जीवन के संबंध में एक 'सबदी' में संकेत दिया है–

अवधू ईस्वर हमारै चेला,
भणीजै मछिन्द्र बोलिये नातीः।
निगुरी पिरथी परले जाती,
ताथै हम उलटी थापना थापी। **(144)**

(भावार्थ : गोरखनाथ ने स्वयं स्पष्ट किया कि वे आदिनाथ भगवान शिव के अवतार हैं और उन्होंने ही शिव के रूप में प्रकट होकर मछिन्द्रनाथ को योग की शिक्षा दी थी। इस प्रकार मछिन्द्रनाथ उनके शिष्य हुए, परन्तु संसार में गुरु शिष्य की परम्परा को बनाये रखने के लिए उन्होंने गोरखनाथ के रूप में अवतार लेकर मछिन्द्रनाथ को अपना गुरु बनाया। इससे स्पष्ट है कि गोरखनाथ का जन्म किसी काल और स्थान पर ढूँढ़ना व्यर्थ है। वास्तव में उन्होंने धर्म की स्थापना के लिए जब-जब आवश्यक हुआ अवतार लेकर सनातन धर्म की रक्षा की।

''तिब्बती कथाओं के अनुसार गोरखनाथ एक बौद्ध बाजीगर थे और उनके सारे कनफटे शिष्य भी पहले बौद्ध थे। परन्तु बारहवीं शताब्दी के अन्त में नेपाल में सेनवंश का नाश होने पर गोरखनाथ शैव मत में चले गये, यही कारण है कि तिब्बती परम्परा में गोरखनाथ का मज़ाक उड़ाया गया। इसका इतना प्रभाव पड़ा कि गोरखनाथ के नाम पर 'गोरखधन्धा' शब्द चल पड़ा। तिब्बत के लामा गोरखनाथ को घृणा की दृष्टि से देखते हैं।'' **('नाथ सम्प्रदाय'- हजारी प्रसाद द्विवेदी पृ.-55-56)**

'गोरक्ष विजय' से स्पष्ट होता है कि कदली स्त्रियाँ योगिनी थीं और गोरखनाथ के गुरु मछिन्दरनाथ ने उनसे कौल ज्ञान प्राप्त किया था। कौल मार्ग तामसी था। गोरखनाथ ने इसे संशोधित करके शुद्ध सात्विक साधना का प्रचार किया। गोरखनाथ की योग साधना में योग के विविध रूप प्राप्त होते है–मंत्र योग, लय योग, हठ योग, राजयोग, महायोग आदि। परन्तु इन सबमें हठ योग की प्रधानता है। गोरख दर्शन में ब्रह्म निराकार और निर्विकार है। वह अकाल, शाश्वत और सनातन हैं। उसकी प्रतिमा आदि नहीं है। उपनिषद में भी ब्रह्म की प्रतिष्ठा इसी प्रकार की गयी है।

गुरु गोरखनाथ अपने समय के महान आध्यात्मिक पुरुष थे। उनका चरित्र स्फटिक की तरह उज्ज्वल व पारदर्शी था। जिन दिनों उनका प्रादुर्भाव हुआ था, उस समय भारतीय धर्म

साधना चिन्तनीय स्थिति में थी। 'अखण्ड ब्रह्मचर्य' का सिद्धान्त अपने पतन की पराकाष्ठा पर था। गुरु गोरखनाथ ने इस पर निर्मम प्रहार किया। साथ ही उन्होंने प्रचलित धर्म मार्गों से जो उचित था, उसे ग्रहण भी किया। वे ज्ञान के उपासक थे। उन्होंने साधना के भक्ति पक्ष पर ध्यान नहीं दिया। गोरखनाथ के 'हठयोग' के लोकप्रिय नहीं होने का यह एक बड़ा कारण था क्योंकि इसमें सम्भवतः भक्ति के लिए कोई स्थान नहीं था।

गोरखनाथ हिन्दी के साथ-साथ संस्कृत के भी अप्रतिम विद्वान थे। हिन्दी में गोरखनाथ के नाम से जो पद उपलब्ध हैं, उनमें भी अधिकतर साधना मार्ग की व्याख्या की गयी है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार, *''गोरखनाथ की हिन्दी की बहुत सी रचनाएं संवाद रूप में मिलती हैं। ऐसा लगता है कि संवाद के रूप में अपने दार्शनिक मत और धार्मिक विश्वास को प्रगट करने की यह पद्धति नाथपंथियों का अपना आविष्कार है। इस पद्धति ने परवर्ती सन्त साहित्य को खूब प्रभावित किया और संवाद रूप में ऐसे अनेक ग्रन्थ लिखे गये जिनका उद्‌देश्य सम्प्रदाय के विश्वास और मत का प्रचार था।''*

तुलसीदास ने भी 'कवितावली' (उत्तर 84) में कहा है कि

गोरख जगायो जोग,
भगति भगायो लोग।
निगज नियोग ते सो कैलिही छटी सी है
काय मन वचन सुभाय तुलसी है जाति
राम नाम को भरोसो जाति को भरोसो है।

अधिकांश विद्वान मानते हैं कि गुरु गोरखनाथ का आर्विभाव विक्रम की दसवीं शताब्दी में हुआ था। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार शंकराचार्य के बाद इतना प्रभावशाली और इतना महिमामण्डित महापुरुष भारतवर्ष में दूसरा नहीं हुआ। देश के कोने-कोने में उनके अनुयायी आज भी पाये जाते हैं। भक्ति आन्दोलन के पूर्व सबसे शक्तिशाली धार्मिक आन्दोलन गोरखनाथ का 'योग मार्ग' ही था। भारतवर्ष की ऐसी कोई भाषा नहीं है, जिसमें गोरखनाथ की कहानियाँ नहीं पायी जाती हैं। इन कहानियों में परस्पर विरोध बहुत है, परन्तु इतना स्पष्ट हो जाता है कि गोरखनाथ अपने युग के सबसे बड़े धार्मिक और सामाजिक महापुरुष थे। उन्होंने जिस धातु को छुआ, वही सोना हो गया।

उनके जन्म स्थान का कोई निश्चित पता नहीं चलता है। परम्पराएं अनेक प्रकार के अनुमान को जन्म देती हैं। इसीलिए भिन्न-भिन्न लोगों ने अपनी रुचि के अनुसार उनका जन्म स्थान मान लिया। 'योगी सम्प्रदाय निष्कृति' में उन्हें गोदावरी नदी के तट के किसी चन्द्रगिर स्थान पर उत्पन्न बताया जाता है। 'नेपाल दरबार' लाइब्रेरी में परवर्ती काल का एक ग्रन्थ 'गोरक्षसहस्त्रनाम' उपलब्ध है। इसमें एक श्लोक है, जिसका आशय है कि दक्षिण दिशा में कोई बढ़व नामक देश है, वही महामंत्र के प्रसाद से गोरखनाथ पैदा हुए थे। यहाँ बढ़व शब्द गोदावरी तीर के प्रदेश का वाचक हो सकता है।

''अस्ति याम्यां (पश्चिमायां) दिशि काश्चिद्वेशः बढ़वः। तत्राजानि महाबुद्धिर्भमहामंत्र

प्रसादतः।''

ब्रुक्स और ग्रियर्सन जैसे विद्वानों ने एक परम्परा का उल्लेख किया है, जिसमें कहा गया है कि गोरखनाथ सतयुग में पंजाब के पेशावर में, त्रेता में गोरखपुर में, द्वापर में द्वारिका के पास हुरमुज में और कलिकाल में काठियावाड़ में पैदा हुए थे। बंगाल में यह विश्वास किया जाता है कि गोरखनाथ वहीं पैदा हुए थे। नेपाली परम्परा के अनुसार गोखनाथ पंजाब से चलकर नेपाल गये थे। पंजाब में झेलम के किनारे गोरखनाथ टीला है। नासिक के योगियों का विश्वास है कि गुरु गोरखनाथ नासिक से पंजाब गये और वहाँ से नेपाल गये थे। ग्रियर्सन ने अनुमान लगाया था कि गोरखनाथ पश्चिमी हिमालय के रहने वाले थे। गोरखबाणी के दो पद ऐसे हैं, जिनमें गोरखनाथ ने उत्तर के योगियों की प्रशंसा की है।

दक्षिणी जोगी रंगा चंगा,
पूरबी जोगी, वादी।
पछमी जोगी बाला भोला।
सिद्ध जोगी उतराधी (41)
अवधू पूरब दिसि व्याधि का रोग,
पश्चिम दिसि मिर्तु का सोग।
दक्षिण दिसि माया का भोग,
उत्तर दिसि सिद्ध का जोग (42)

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपनी पुस्तक 'नाथ सम्प्रदाय' में कहते हैं–''मेरा अनुमान है कि गोरखनाथ निश्चित रूप से ब्राह्मण परिवार में पैदा हुए थे। उनके गुरु मछिन्दर नाथ भी शायद ही कभी बौद्ध साधक रहे हों।'' इस प्रकार हिन्दी के कुछ आचार्यों का यह मत सही नहीं लगता है कि गोरखनाथ बौद्ध महायान सम्प्रदाय की बज्रयान शाखा के साधक थे। मैं समझता हूँ गुरु गोरखनाथ शुद्ध रूप से सनातनी परम्परा के शैव मत के महायोगी थे। उनके जन्म के सम्बन्ध में जो तरह-तरह के उल्लेख मिलते हैं, उसका कारण भी यही है कि उन्होंने धर्म की रक्षा के लिए विभिन्न युगों में अवतरित होकर उपदेश दिया था। गीता में कहा गया है कि –

यदा-यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
तदा तदा अवतीतीर्य अहम् करिष्यामि अरिसंक्षयम

तुलसीदास ने भी कहा कि–

जब-जब होई धर्म की हानी बाढ़ै असुर अधम अभिमानी,
तब तब धरि प्रभु विविध शरीरा। हरहि पीर मानव धरि धीरा।

गुरु गोरखनाथ संस्कृत के उद्‌भट विद्वान थे। उनके नाम से संस्कृत में कई पुस्तकें मिलती हैं परन्तु उनके नाम पर मिलने वाली कई पुस्तकों को वास्तव में उनके बाद के साधकों ने उनके सिद्धान्तों को स्पष्ट करने के लिए लिखा है। परन्तु इतना निश्चित है कि गोरखनाथ ने 'योग मार्ग' को एक बहुत ही व्यवस्थित रूप दिया। उन्होंने अपने अनुभव

और शैव सिद्धान्त के आधार पर चक्रों की संख्या निश्चित की। सबसे बड़ी बात यह है कि उन्होंने उस समय प्रचलित बज्रयानी साधना के पारिभाषिक शब्दों को परिमार्जित करके सनातन परम्परा में ढाल दिया। उन्होंने लोकभाषा को भी अपने उपदेश का माध्यम बनाया। संस्कृत भाषा में गोरखनाथ की निम्नलिखित महत्वपूर्ण पुस्तकें मिलती हैं-

1. अमनस्क, 2.अंगरोध शासनं, 3. अवधूत गीता, 4. गोरक्ष पद्धति, 5.गोरक्ष शतक, 6.गोरक्ष संहिता, 7.सिद्ध सिद्धान्त पद्धति, 8. गोरक्ष सिद्धान्त संग्रह

हिन्दी या लोक भाषा में गोरखनाथ की कई पुस्तकें मिलती हैं। इनका सम्पादन डॉ. पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल ने किया है। डॉ. बड़थ्वाल के प्रयास से गोरखनाथ के नाम से चालीस पुस्तकों का पता चला है-

1. सबदी 2. पद 3. सिक्षादर्शन 4. प्रांण संकली 5. नरवै बोध 6. आत्म बोध 7. अभय मा जोग 8. पन्द्रह तिथि 9. सप्तवार 10. मछिन्दर गोरखबोध 11. रोमावली 12. ज्ञान तिलक 13. ज्ञान चौतीसा 14. पंच मात्रा 15. गोरख गणेश गोष्ठी 16. गोरखदत्त गोष्ठी 17. महादेव गोरख गुष्टि 18. सिष्ट पुरान 19. दयाबोध 20. जाति भौरावली 21. नौग्रह, 22. नवरात्रि 23. अष्टयारच 24. रहरास 25. ज्ञानवाला 26. आत्मबोध 27. बृत 28. निरंजन प्रांण 29. गोरख बचन 30. इन्द्रदेवता 31. मूल गर्भावली 32. खाणी वाणी 33. गोरख सत 34. अष्ट मुद्रा 35. चौबीस सिद्धि 36. षडक्षरी 37. पंच अग्नि 38. अष्टचक्र 39. अवनिसिलुआ 40. काफिर बोध

डॉ. बड़थ्वाल के अनुसार 'सबदी' गोरखनाथ की सबसे प्रमाणित रचना है। ऊपर लिखी गयी सभी रचनाओं में से पहली 14 रचनाएं निश्चित रूप से प्राचीन हैं और गोरखनाथ की रचनाएं हैं। परन्तु शेष रचनाओं के बारे में अधिकारपूर्वक कुछ नहीं कहा जा सकता है। डॉ. बड़थ्वाल के अनुसार नाथ परम्परा में इनके रचयिता प्रसिद्ध गोरखनाथ से भिन्न नहीं समझे जाते हैं। मैं अधिक सम्भव समझता हूँ कि गोरखनाथ विक्रम की ग्वारहवीं शती में हुए। ये रचनाएं जैसी हमें उपलब्ध हो रही हैं, ठीक वैसी ही उस समय भी थीं, ऐसा कहा नहीं जा सकता। परन्तु उपलब्ध रचनाओं में भी प्राचीनता के प्रमाण विद्यमान हैं, जिससे कहा जा सकता है कि सम्भवतः इनका मूलोद्‌भव ग्यारहवीं शती ही है।

डॉ. अनुज प्रताप सिंह ने अपनी पुस्तक 'गोरखनाथ और नाथ सिद्ध' में पृष्ठ 56 पर लिखा है कि यदि भारत के इतिहास को देखा जाये, तो हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल अर्थात् 14वीं शताब्दी के पूर्व शैवसम्प्रदाय तथा नाथ सम्प्रदाय का प्रभुत्व था। वैष्णवी भक्ति पर भी शैवागम का प्रचुर प्रभाव है। 1558 विक्रम संवत् में रचित बाबा पुरुषोत्तम दास की रचना 'जैमिनि याशवेध-भाषा' में शिव, राम और कृष्ण की कथाओं को मिला दिया गया है। 'सूरसागर' और 'रामचरितमानस' पर भी नाथ सम्प्रदाय की साधना एवं विचारधारा का प्रभाव है। इसके साथ शाक्त रचनाएं भी पूरे देश में पहले हुई थीं। नाथ सम्प्रदाय के साधक भी इससे प्रभावित थे। गोरखनाथ के गुरु मछिन्द्रनाथ के जो ग्रन्थ

प्राप्त हुए, उन्हें 'कौल सिद्ध' कहा गया है। अब तक जो विचार किया गया है, उसमें नाथ और सिद्ध सम्प्रदाय को मिलाकर देखा गया है। आवश्यकता इस बात की है कि दोनों सम्प्रदायों के साहित्य का मूल्यांकन अलग-अलग किया जाना चाहिए। यह सच है कि गोरखनाथ के गुरु मछिन्द्रनाथ कौलाचार के साधक थे। किन्तु गोरखनाथ ने अपने गुरु की विचारधारा को बदल दिया और उन्हें सात्विक सनातन मार्ग का साधक बना दिया। गोरखनाथ का सबसे बड़ा योगदान यह है कि उन्होंने भारतीय योग साधना पद्धति को, जो भटक गयी थी, उसका परिष्कार करके विशुद्ध सनातन परम्परा का मार्ग प्रशस्त किया। गुरु गोरखनाथ का दर्शन विशुद्ध रूप से गीता, वेद और पुराणों पर आधारित है। अतः गुरु गोरखनाथ ने निश्चित रूप से सनातन धर्म की पुनः स्थापना की। उनके साहित्य का प्रभाव परवर्ती हिन्दी साहित्य पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। कबीर और तुलसी ही नहीं, रविदास पर भी गोरखनाथ का प्रभाव स्पष्ट है। सबदी संख्या-153 देखिये–

अवधू मन चंगा तो कठौती ही गंगा।
बांध्या मेल्हा तो जगत चेला।
वदंत गोरख सति सरूप
तत विचारै तै रेखन रूप

रविदास का यह कथन लोकप्रिय मुहावरा है- *मन चंगा तो कठौती में गंगा।*

योगी हुकुम सिंह तंवर ने अपनी पुस्तक 'नाथ सम्प्रदाय इतिहास एवं दर्शन' पृष्ठ-146 पर लिखा है– नेपाल लाइब्रेरी के एक ग्रन्थ में नेपाल के राजगुरु योगीप्रवर श्री नरहर नाथ जी ने एक ग्रन्थ में एक सन्दर्भ खोज निकाला, जिसके आधार पर गुरु गोरखनाथ का प्रार्दुभाव बैशाख पूर्णिमा माना जाता है।

बैशाखी-शिव-पूर्णिमा तिथिवरे वारे शिवे मंगले।
लोकानुग्रह-विग्रहः शिवगुरुर्गोरक्षानाथोऽभवत्।

गुरु गोरखनाथ का प्रार्दुभाव दसवीं या ग्यारहवीं विक्रम शताब्दी में हुआ था। उस समय अवधी, भोजपुरी तथा राजस्थानी लोकभाषाएं अपनी प्रारम्भिक अवस्था में थीं। फिर भी गुरु गोरखनाथ ने अपनी बातों को आम जनता तक पहुँचाने के लिए इन्हीं बोलियों का उपयोग किया। कुछ विद्वान इन्हें 'संध्या भाषा' कहते हैं। वास्तव में हिन्दी उस समय गर्भावस्था में थी। गुरु गोरखनाथ की रचनाओं से भक्ति काल के हिन्दी कवियों को प्रेरणा मिली। गोरखनाथ की भाषा को कुछ लोग सधूकड़ी या सन्ध्या भाषा कहते हैं, परंतु सच्चाई यह है कि गोरखनाथ की भाषा भोजपुरी, अवधी, राजस्थानी और पहाड़ी का प्रारंभिक रूप है। इसीलिए गोरखनाथ को लोकभाषा हिन्दी का आदि कवि माना जाना चाहिए।

भगवद्गीता और भगवान गोरखनाथ

भारत की प्राचीन विरासत योग विद्या की लोकप्रियता बढ़ती जा रही है। योग विद्या के महत्व को मान्यता प्रदान करते हुए संयुक्त राष्ट्र की संस्था 'यूनेस्को' ने भी प्रतिवर्ष 21 जून को अतंर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाने की घोषणा की है। इसी क्रम में पिछले 3 वर्षों से विश्व के अधिकांश देशों में 21 जून को अतंर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाया जाता है। योग विद्या भारतीय संस्कृति और सभ्यता से जुड़ी सबसे प्राचीन विद्या है। इसका उल्लेख विश्व के प्राचीनतम साहित्य ऋग्वेद में भी मिलता है। हड़प्पा और मोहनजोदड़ों की खुदाई में प्राप्त अवशेषों से ऐसा संकेत मिलता है कि उस समय योग विद्या किसी न किसी रूप में विद्यमान थी। अनन्तकाल से चली आ रही योग विद्या को पहली बार महर्षि पतंजलि ने योग सूत्रों की रचना कर शास्त्रीय रूप दिया। तत्पश्चात भारत के सभी धार्मिक, आध्यामिक और दार्शनिक सम्प्रदायों ने योग विद्या को अपनाया। आज भी योग विद्या विभिन्न रूपों में प्रचलित है।

महर्षि पंतजलि से पहले योग विद्या के दो प्रमुख स्त्रोत मिलते हैं। श्रीमद्‌भगवद् गीता में कृष्ण और अर्जुन के संवाद के रूप में योग विद्या का वर्णन किया गया है। भगवद् गीता महाभारत का अंश है, जिसकी रचना महर्षि वेदव्यास ने की है। गीता में सभी उपनिषदों का सारांश समाहित है। गीता में भगवान कृष्ण ने स्वयं कहा कि योग विद्या प्राचीन काल से चली आ रही है। उन्होंने सबसे पहले इसका ज्ञान विवस्वान अर्थात् सूर्य देवता को दिया। जिन्होंने इसे अपने पुत्र स्वयंभु मनु को दिया। मनु ने इसे अपने पुत्र इक्ष्वाकु को दिया। श्रीकृष्ण ने कहा कि इस प्रकार योग विद्या पिता-पुत्र की परम्परा से राजर्षियों को मिलती रही। परन्तु कालान्तर में यह विद्या लुप्त हो गयी। श्रीकृष्ण ने कहा कि हे अर्जुन वही योग विद्या मैं तुम्हें दे रहा हूँ। गीता अध्याय-04, श्लोक 1 से 3 तक श्रीकृष्ण ने कहा–

इमं विवस्वते योगं
प्रोक्तवान् अहम् अव्ययम्।
विवस्वान् मनवे प्राह,
मनुः इक्ष्वाकवे अब्रवीत्।
एवं परम्परा प्राप्तम्,
इमम् राजर्षयोः विदुः।
स कालेनेह महता योगोनष्टः परंतप।
स एवायं मया ते अद्य,
योगः प्रोक्ता पुरातनः।
भक्तोसि में सखा चेति,
रहस्यं हि एतमुत्तमम्।

गीता के अतिरिक्त योग विद्या का दूसरा महत्वपूर्ण स्त्रोत गुरु गोरखनाथ हैं। नाथ सम्प्रदाय की मान्यता है कि 'भगवान योगेश्वर शिव गोरक्ष गोरखनाथ जी ने लोक-लोकान्तर के प्राणियों को सतस्वरूप के योग ज्ञान में प्रतिष्ठित करने के लिए योग देह धारण कर शिव स्वरूप महायोग ज्ञान को भगवती पार्वती के प्रति सप्तश्रृंग पर निरूपण किया(योगी अवैद्यनाथ 'गोरखवाणी' की प्रस्तावना में)। गोरखनाथ ने स्वयं अपनी रचना 'सबदी' के 144 वें पद में कहा कि–

अवधू ईश्वर हमारे चेला भणिजै,
मछिन्दर बोलिये नाती।
निगुरी पिरथी परलै जाति,
ताते हम उलटी थापना थापी। (144)

गोरखनाथ कहते हैं कि योग का महाज्ञान, जो शिव प्रदत्त कहा गया है, मूल स्वरूप मुझसे ही प्रगट है। इस प्रकार योग के प्रतिपादक ईश्वर हमारे शिष्य हैं और उनसे मछिन्दरनाथ ने योग ज्ञान का श्रवण किया। अतः मछिन्दर हमारे शिष्य के शिष्य हैं। परन्तु मैने संसार में गुरु-शिष्य की महिमा बनाये रखने के लिए मछिन्दरनाथ को अपना गुरु बनाया। इस प्रकार स्पष्ट है कि योग विद्या के प्रथम स्त्रोत परम शिव अर्थात् गुरु गोरखनाथ हैं। इस प्रकार का दावा भगवान कृष्ण ने गीता में नहीं किया। श्रीकृष्ण ने तो मात्र इतना ही कहा कि उन्होंने परम्परा से प्राप्त योग विद्या का ज्ञान अर्जुन को दिया। इससे यह अनुमान लगाना ठीक होगा कि भगवान कृष्ण ने गीता में जो योग का ज्ञान दिया, वह गोरखनाथ की सबदी में वर्णित ज्ञान से भिन्न नहीं है। यही कारण है कि गोरखनाथ द्वारा उपदिष्ट योग ज्ञान और गीता के योग ज्ञान में इतनी समानता दिखाई देती है। शैव सम्प्रदाय के अनुसार परम शिव ही सृष्टि के निर्माता हैं, वही ब्रह्म हैं, वहीं नाथ सम्प्रदाय के अलख निरंजन हैं। कई पुराणों में यह भी कहा गया है कि ब्रह्म ने सृष्टि की रचना करते समय सबसे पहले महादेव, विष्णु और ब्रह्मा को पैदा किया। यहाँ विष्णु के अवतार कृष्ण हैं।

अतः शैव सम्प्रदाय के अनुसार भगवान कृष्ण और गोरखनाथ द्वारा प्रतिपादित योग ज्ञान में कोई विशेष अन्तर नहीं है।

गुरु गोरखनाथ द्वारा प्रतिपादित योग के बारे में हिन्दी के कुछ वरिष्ठ समालोचकों ने यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया है कि गुरु गोरखनाथ बौद्धों की वज्रयान शाखा के योगी थे। अतः उनका योग बौद्ध दर्शन से प्रभावित है। परन्तु गहराई से विचार करने के बाद यह तथ्य उजागर होता है कि गुरु गोरखनाथ द्वारा प्रतिपादित योग प्राचीन भारतीय मनीषियों द्वारा वर्णित योग से भिन्न नहीं है। श्रीमद्‌भगवत गीता में भगवान कृष्ण ने योग के बारे में विस्तार से और शास्त्रीय ढंग से जानकारी दी है, उसकी तुलना जब हम गोरखनाथ के योग से करते हैं, तो स्पष्ट हो जाता है कि गोरखनाथ पर गीता का कितना प्रभाव है। भगवान कृष्ण ने अर्जुन के पूछने पर अध्याय-6, श्लोक 10 से 17 में योग और योगी के लक्ष्णों के बारे में कहा–''योगी को एकान्त में रहकर निरन्तर ध्यान करना चाहिए। ऐसा योगी जिसके चित्त में कोई इच्छा नहीं है और जो अपरिग्रही है, योगी को एक पवित्र स्थान पर कुश, मृगचर्म और कपड़े का आसन बनाकर बैठना चाहिए। आसन ऐसा हो, जो न ज्यादा ऊँचा हो, न ज्यादा नीचा हो। इस प्रकार के आसन पर मन को एकाग्र करके इन्द्रियों और चित्त को नियंत्रित करके योग करना चाहिए। योगी को ध्यान करते समय अपना सिर, गर्दन और देह सीधा रखना चाहिए। योगी को अपना मन प्रशान्त रखना चाहिए तथा भय रहित होकर ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए मन को परमात्मा में लगाकर निरन्तर उसी का चिंतन करना चाहिए। इस प्रकार मन को निरन्तर परमात्मा में लगाने से योगी को अनश्वर शांति मिल जाती है और वह निर्वाण प्राप्त कर लेता है। योग उसके लिए नहीं है, जो अधिक भोजन करता है या जो बिल्कुल नहीं खाता है या जो ज्यादा सोता है या जो लगातार जागता रहता है। योगी को नियंत्रित आहार और मनोरंजन करना चाहिए। उसे अपने कार्यों को भी नियमानुसार करना चाहिए।''

गोरखनाथ ने योगी के लिए ब्रह्मचर्य व्रत पालन अनिवार्य बताया है। गीता में वर्णित उपरोक्त बातें भी गोरखनाथ ने अपनी 'सबदी' के माध्यम से लोगों को बतायी है। उन्होंने कहा–

यन्द्री का लड़बड़ा जिभ्या का फूहड़ा।
गोरख कहे ते पतंति चूहड़ा।
काछ का जति, मुख का सति।
सो सत पुरुष उत्तमे कथी। (152)

योगी के लिए वीर्य की रक्षा का महत्व गोरखनाथ की इस 'सबदी' में देखिये–

जल के संजमि अटल आकाश,
अन्न के संजमि जोति प्रकाश।
पवना संजमि लाणेबंध,
व्यंद (वीर्य) संजमि थिर है कंध। (123)

योगी के लिए आसन, आहार, नींद आदि का जो वर्णन गीता में है। वैसा ही वर्णन गोरखनाथ ने इस 'सबदी' में किया है–

आसण दिढ़ आहार दिढत्र
जे न्यंन्दा दिढत्र होई।
गोरख कहै सूणौ रे पूता,
मरे न बूढ़ा होय। (125)

गीता अध्याय-17 श्लोक-6 में कहा गया कि खाद्य पदार्थ कटु, अम्ल, लवण, अति ऊष्ण, तीक्ष्ण, रूक्ष, जलन पैदा करता है, वह राजसी आहार है। वह योगी के लिए उचित नहीं है। अब देखिये गोरखनाथ क्या कहते हैं–

अवधू खारै खीरें खाटै झरै, मीठै, उपजै रोग।
गोरख कहै सुणौ से अवधु अनै पांणी जोग। (140)

अतः गोरख कहते हैं कि योगी को केवल अनाज और पानी से बना सात्विक आहार लेना चाहिए। इसी सिलसिले में दूसरी 'सबदी' देखिये–

जिभ्या, सवाद तत तन खोजै,
हेला करै गुरु वाया।
अगनि बिहूंणा बंध न लागै,
ढलक जाई रस काचा। (143)

अर्थात् जीभ के स्वाद के लिए गुरु के वचनों की अवहेलना करने वाला कभी सिद्धि नहीं प्राप्त कर सकता है। गोरखनाथ डंके की चोट पर कहते हैं कि योग विद्या को हमने ही प्रकट किया है, जबकि गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं कि उन्होंने परम्परा से प्राप्त योग विद्या को अर्जुन को दिया। गोरखनाथ की एक 'सबदी' देखिये–

अवधू ईस्वर हमारे चेला भणिजै,
मछिन्द्र बोलिये नाती।
निगुरी पिरथी परलै जाती,
ताथै हम उलटी थापना थोपी। (141)

अर्थात् गोरख कहते हैं कि योग ज्ञान मुझसे ही प्रगट है। परम आराध्य ईश्वर, जिन्होंने योग प्रगट किया है, वे हमारे शिष्य हैं, उनसे गुरु मछिन्दर नाथ ने श्रवण किया। इस प्रकार वे हमारे पौत्र यानी तीसरी पीढ़ी के हुए। मेरे गुरु की महिमा की रक्षा के लिए गोरखनाथ बनकर मछिन्दरनाथ का शिष्यत्व ग्रहण किया। अगर मैं ऐसा नहीं करता, तो गुरुत्व की परम्परा नष्ट होने से पृथ्वी का नाश हो जाता।

'गीता' में भगवान कृष्ण ने अध्याय-6 श्लोक-17 में कहा कि–

युक्ताहारविहारश्च युक्तः चेष्टस्य कर्मसु
युक्तस्वप्नावबोधृस्य योगी भवति दुखहा।

अब देखिये गोरखनाथ क्या कहते हैं–

भरि भरि खाइ ढरिढरि जाई,
जोग नहि पूता बड़ी बलाइ।
संजण होई बाइसंग्रहौ,
इस विधि अकल पुरिस को गहौ। (145)

तत्पर्य यह है कि योगी को युक्ताहार-विहार करना चाहिए। पेटभर भोजन करने से काम वासना बढ़ती है, वीर्य का नाश होता है, यह योग नहीं है। यह तो योग के नाम पर बला है, विपत्ति है। योगी के लिए संयम आवश्यक है। इससे प्राणायाम में सफलता मिलती है। इस विधि से जीवात्मा (पुरिस) अर्थात् परम शिव का साक्षात्कार कर लेता है। गोरखनाथ का विचार है, न तो अधिक भोजन करना चाहिए और न ही उपवास करना चाहिए। योगी को मध्यम मार्ग पर चलना चाहिए। नीचे की 'सबदी' देखिये–

खाये भी मरिये, अणखाये भी मरिये,
गोरख कहै पूता संजम ही तरिये।
मधि निरंतर कीजै बास,
निश्चल मनुआ थिर होई सांस। (140)

इसी तरह की बात गीता अध्याय-6 श्लोक-16 में कही गयी है।

गोरखनाथ कहते हैं कि वीर्य की रक्षा बहुत महत्वपूर्ण है–

व्यंद (वीर्य) ही जोग,
व्यंद ही भोग।
व्यंद ही हरै, चौसठि रोग
या विंद का कोई जाणै भेव,
सो आप करता आपै देव। (148)

गीता में भगवान कृष्ण ने अध्याय 16 के 2 और 3 श्लोकों में कहा कि विचारों और कार्यों में अहिंसा श्रेयस्कर है। गीता कहती है कि अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, शान्ति सभी जीवों के प्रति दया तथा विषयों के मिलने पर भी इन्द्रियों का निग्रह श्रेयस्कर है। अब देखिये गोरखनाथ क्या कहते हैं–

अवधू मांस भखंत दया का नाश,
मद पीवत तहां प्राण निरास।
भांगि मखंत ज्ञान, ध्यान् खोवंत,
जम दरबारि ते प्रांणी रोवंत।

अर्थात् मांस, मदिरा और भांग के सेवन से बुद्धि विकृत हो जाती है। गीता के श्लोकों में यह बात कही गयी है कि स्वर्ग, नरक, पितर और पाप-पुण्य होते हैं तथा सन्तान के बुरे कार्यों से पितर लोक स्वर्ग से गिरकर नरक में चले जाते हैं–

पतन्ति पितरो ह्येषां,
लुप्त पिण्डोदक क्रिया।

इससे स्पष्ट है कि गोरखनाथ भी गीता की तरह पाप-पुण्य और स्वर्ग-नरक में विश्वास करते हैं–

जोगी होय पर निंदा झरवैं,
मद मांस अरू भांगि भखै।
इकोतरसै पुरिखा नरकहि जाई,
सति सति भाखत श्रीगोरखराई। (164)

गीता अध्याय-6 में योगी के लिए साधना की जो पद्धति बतायी गयी है, वे ही बातें गोरखनाथ की रचना 'पद' के 30 वें कविता में कही गयी है। (**गोरखवाणी पृष्ठ-171**)

ऐसा जाप जपा मन लाई,
सोहं सोहं अजपा गाई।
आसण दिढ़कर धरौधियांन,
अहनिस सुमिरौ ब्रह्म गियायंन।
जाग्रत निद्रा सुलप अहारं,
कामक्रोध, अहंकार निवारं।
नासा उग्र नियुज्यौ बाई,
इड़ पिंगला मधि समाई।
छ सै सहस इकीसौ जाप,
अन्हद उपजै आपहि आप।
बंक नालि में उगै सूर,
रोम रोम धुनि बजौ जूर।
उलटे कंवल सहसि बल वास।
भ्रमर गुफा महि जोति प्रकास,
मछिंद्र प्रताप जनी गोरख कहै।
परम तत कोई बिरला लहै

यही बात गीता के अध्याय-7, श्लोक-तीन में कही गयी है। गीता में भगवान कृष्ण कहते हैं कि हे अर्जुन हजारों में कुछ ही लोग परमतत्व के अनुभव के लिए साधना करते हैं और उनमें से बिरला ही कोई सफलता प्राप्त करता है। गोरखनाथ कहते हैं कि आसन पर दृढ़पूर्वक बैठना, चित्त को परमात्मा में लगाना, दिन-रात ब्रह्मज्ञान के बारे में सोचना, नींद आने पर जागते रहना, थोड़ा खाना, काम-क्रोध, अहंकार का त्याग और अजपा जाप करने से सिद्धि मिलती है। उन्होंने बताया कि रात-दिन मिलाकर जीवात्मा इक्कीस हजार छह सौ बार सांस लेता है। प्रत्येक सांस को अलख निरंजन के परम अनुभव के बाद निवृत्ति अर्थात् निर्विकल्पक समाधि तथा सुरति और परम शिव का ध्यान भी आवश्यक नहीं है। गोरखनाथ कहते हैं कि वहाँ न भोग, न योग, न जरा, न मृत्यु और न रोग। वहाँ ओंकार वाणी भी नहीं है। वहाँ रात-दिन, उदय-अस्त कुछ नहीं है।

निरति न सुरति जोंग न भोगं,
जरा मरण नहीं तहां रोंग।
गोरख बोले एकांकार,
नहि तहं वाचा ओ अकार। (110)
उदय न अस्त राति न दिन,
सखे सचराचर भव न भिन्न।
सोई निरंजन डान न मूल,
सब कायिक सुक्षमन न अस्थूल। (111)

अब देखिये गीता अध्याय-15 श्लोक-6 में श्रीकृष्ण ऐसे ही बात कहते हैं–

न तत्र भासयते सूर्यो
न शंशाको न पावकः।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते,
तद्धाम परमं मम्।

सन्यासी और योगी के लक्षण बताते हुए गोरखनाथ कहते हैं –

सन्यासी सोई करै सर्वनास,
गंगन मंडल महि मांडे आस।
अनहद सू मन उनमन रहे,
सो सन्यासी अगम की कहै। (103)

यही बात श्रीकृष्ण ने गीता में कही–

कामयानां कर्मणां न्यासं,
सन्यासं कवयो विदुः।

गीता अध्याय-5 श्लोक-13 में शरीर में 9 द्वार होने का उल्लेख है। यही बात गोरखनाथ की निम्न 'सबदी'-135 में कही गयी है।

उनमन जोगी दसवै द्वार। नाद व्यंद ले धूं धूंकार।
दसवे द्वारे देइ कपाट। गोरखखोजी औरे बाट। (135)

गोरखनाथ ने गीता में बताये नौ द्वारों के अतिरिक्त दसवें द्वार का भी उल्लेख किया है, जो कोई नयी बात नहीं है, परन्तु 'सबदी'-52 में गोरखनाथ ने भी गीता की तरह केवल नौ द्वारों का उल्लेख किया है–

सास उसास बाइ कौं भषिवा, रोकि लेहु नव द्वारं।
छठै छमासि काया पलटिबा, तब उनमॅनी जोग अपारं। (52)

गोरखनाथ ने योगी के लक्षण बताते हुए कहा, जो गीता के समान ही है–

जोगी होई पर निंदा झषै।
मद मास अरू भांगी जो भषै।
इको तरसे पुरिखा नरकही जाई।

सति सति भाखंड श्री गोरखनाथ। (164)

अवधू मांस भषंत दया का नास,
मद पीवत तहां प्राण निरास।
भांगि भषंत ज्ञांन, ध्यानं, सोखन्त।
जम दरबारी ते प्राणी सोवंत।

इस प्रकार स्पष्ट है कि गोरखनाथ ने नशाखोरी का विरोध किया है। वे इसके सख़्त ख़िलाफ़ थे। यही बात गीता में भी कही गयी है।

गोरखनाथ ने जिस योग की स्थापना की है, वह वास्तव में गीता में प्रतिपादित योग से भिन्न नहीं है। श्रीकृष्ण ने जिस परिस्थिति में अर्जुन को योग ज्ञान दिया, वह परिस्थिति गोरखनाथ की परिस्थिति से भिन्न थी। श्रीकृष्ण का उद्देश्य केवल अर्जुन को युद्ध करने के लिए प्रेरित करना था। अतः उन्होंने कर्म योग, ज्ञान योग, ध्यान योग और निष्काम कर्म का भी ज्ञान दिया। परन्तु गोरखनाथ की परिस्थिति बिल्कुल भिन्न थी, उनके समय में योग विद्या का ह्रास चरम पर था। योग के नाम पर कौलाचार और तामसी गतिविधियाँ बढ़ गयी थीं और शुद्ध योग विलुप्त हो गया था। इसलिए गोरखनाथ ने बहुत विस्तार से योग के बारे में योगियों और आम आदमी को समझा कर योग ज्ञान की पुनः प्रतिष्ठा की। वास्तव में गीता में उपदिष्ट योग और गोरखनाथ के योग में कोई मौलिक अन्तर नहीं है। गोरखनाथ ने भी एक 'सबदी' में योगी को सामान्य कर्म करते रहने की सलाह दी, जो गीता में श्रीकृष्ण ने विस्तार से बतायी है।

हिन्दू ध्यावै देहुरा मुसलमान मसीत

गुरु गोरखनाथ सिद्ध आध्यात्मिक महापुरुष होने के साथ-साथ महान समाज सुधारक भी थे। वे निर्भीक और स्पष्ट वक्ता थे। उनके समय में देश में मुसलमान आक्रमणकारियों का साम्राज्य स्थापित होने लगा था। उनके साथ इस्लाम के प्रचार के लिए आये काजी, मुल्ला और मौलवी भी सक्रिय हो गये थे। इससे सनातन धर्म संकट में पड़ गया था। मुल्ला-मौलवियों ने इस्लाम के प्रचार के लिए दुष्प्रचार का रास्ता अपनाया। गुरु गोरखनाथ ने इसका खुलकर विरोध किया। तत्कालीन परिस्थितियों में काजियों का विरोध करना केवल गुरु गोरखनाथ के ही वश की बात थी। उन्होंने कहा कि मोहम्मद साहब द्वारा प्रदत्त कुरान शरीफ़ में कोई कमी नहीं है, किन्तु काज़ी लोग इसकी गलत व्याख्या कर आम जन को भ्रमित कर रहे हैं। गुरु गोरखनाथ ने मुस्लिम समुदाय की कभी बुराई नहीं की। उन्होंने मुस्लिम समुदाय की नहीं अपितु केवल मुल्लाओं और मौलवियों के आडम्बर का विरोध किया। गुरु गोरखनाथ के परवर्ती संत कबीरदास ने तो हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों समुदायों की आलोचना की। हालांकि उन्होंने पंडितों और मुल्लाओं को भी नहीं छोड़ा। गुरु गोरखनाथ ने किसी समुदाय की आलोचना नहीं की। उनका प्रयास सभी सम्प्रदायों में सद्‌भावना स्थापित करना था। वे सच्चे अर्थों में आध्यात्मिक समाजसेवी थे। उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से लोगों को आडम्बर से बचने की सलाह दी। यही कारण है कि पुराणपंथी लोगों ने गुरु गोरखनाथ के खिलाफ़ अनर्गल बातें कीं। यहाँ तक कि उन्हें 'कनफटा योगी' कहकर उनका मजाक उड़ाया। गोरखनाथ के कार्यों को 'गोरखधंधा' बताकर उन्हें नीचा दिखाने की कोशिश की गयी। मुस्लिम और अंग्रेज़ी शासनकाल में गोरखपंथियों को बड़ा कष्ट उठाना पड़ा। अंग्रेज़ी में एक कहावत है, जिसका अनुवाद है कि अगर किसी की हस्ती को मिटाना हो, तो उसे बुरा नाम दे दो। गुरु गोरखनाथ के विरोधियों ने उनकी विचारधारा को समाप्त करने के लिए उनके कार्यों

को बुरा नाम दे दिया। और कहा, यह सब 'गोरखधंधा' है परन्तु गुरु गोरखनाथ ने इन सबकी कोई परवाह नहीं की। वे अपने रास्ते पर चलते रहे। उनकी एक कविता देखिये–

महंमद महंमद न करि काजी
महंमद का विषम विचारम्।
महुमद हाथि करद जे होती
लोहै घड़ी न सारं।।

भावार्थ, गोरखनाथ ने मुसलमानों को अगाह किया कि वे मोहम्मद साहब के शब्दों का सही अर्थ समझें। उन्होंने कहा कि हे काजी, केवल मोहम्मद का नाम ही मत रटते रहो। उनके विचार बहुत विषम अर्थात् गूढ़ हैं। मुहम्मद के हाथ में जो करद या चाकू है, वह लोहे या इस्पात का नहीं है। वह प्रेम से बनी दिव्य शब्दों की शक्ति है। उन्होंने जीव हिंसा का प्रतिपादन नहीं किया।

सबदै मारी सबद जिलाई
ऐसा महमंद पीरं।
ताकै भरम न भूलो काजी
सो बल न ही सरीरं।।

भावार्थ, मुहम्मद ऐसे पीर हैं जो अपने गूढ़ वचनों से ही साधक को मार सकते हैं और जिला भी सकते हैं। हे काजी तुम भ्रम में मत पड़ो, जैसी आध्यात्मिक शक्ति मुहम्मद साहब में है, वह तुम्हारे अन्दर नहीं है। मुहम्मद साहब ने अपने शब्दों से शुद्ध आध्यात्म का प्रतिपादन किया।

नाथ कहतां सब जग नाथ्या
गोरख कहंता गोई।।
कलमा का गुरू महंमद होता
पहले हुआ सोई।।

भावार्थ, 'नाथ' शब्द परमात्मा परम शिव का बोधक है। इसी प्रकार 'गोरख' शब्द विश्वब्रह्म का प्रतीक है, परन्तु केवल नाथ या गोरख शब्दों को रटने से आध्यात्मिक लक्ष्य नहीं प्राप्त किया जा सकता है। उसके लिए तो योग का मार्ग अपनाना होगा। इसी प्रकार कलमा दिव्य शक्ति देने वाला है, जिसे मुहम्मद साहब ने प्रकट किया। परन्तु केवल कलमा का उच्चारण ही पर्याप्त नहीं है। इसे अन्तर्मन से समझना चाहिए। इसके लिए योग मार्ग ही श्रेयस्कर है।

उत्पति हिन्दू जरणा जोगी।
अकलि पीर मुसलमानी।
ते राह चीन्हो हो काजी
मुला ब्रह्मा विष्णु महादेव मानी

भावार्थ, गोरखनाथ का दृढ़ मत है कि योग से आदमी के विचारों में भी बदलाव लाया

जा सकता है। उन्होंने देखा कि मुसलमान आक्रमणकारी मंदिरों और मठों को जला रहे हैं। निर्दोष लोगों को प्रताड़ित किया जा रहा है। अतः उन्होंने मुसलमानों को भी योग करने की सलाह दी। उपरोक्त 'सबदी' में उन्होंने अपना स्वयं का उदाहरण देते हुए कहा– हमने हिन्दू के घर में जन्म लिया, पर योगाग्नि से देह को परिपक्व कर योगी हो गये। मुसलमानों को भी अपने गुरु के प्रति विश्वास करते हुए योग करना चाहिए। उन्होंने काजियों और मुसलमानों से कहा कि उन्हें भी योग करना चाहिए, जिसे ब्रह्मा, विष्णु और महादेव ने भी अपनाया। केवल मोहम्मद के नाम की रट लगाने से मुक्ति नहीं मिलेगी।

महमंद महमंद न करि काजी,
महमंद का बौहोत विचारम्
महमंद साथि पकंबर सीधा
ये लाख अस्सी हजारम्।

भावार्थ, हे काजी न्याय करते समय मुहम्मद साहब के पवित्र शब्दों का मर्म समझे बिना बार-बार उनके नाम का उल्लेख मत करो। मुहम्मद साहब ने निष्पक्ष और निर्मल अमृतवाणी में कुरान में जीवन का सिद्धान्त निरुपित किया। उनके वचन को समझने के लिए अस्सी हजार से एक लाख पैगम्बरों ने कठोर साधना की।

कुरानशरीफ़ में पैगम्बरों की संख्या एक लाख चौबीस हजार बतायी गयी है। गुरु गोरखनाथ का संकेत इसी तथ्य की ओर है, उनका कहना था कि कुरानशरीफ़ में अन्य पैगम्बरों द्वारा कही बातों को भी सम्मिलित किया गया है। अतः काजी को न्याय करते समय उन सबका ध्यान रखना चाहिए।

हिन्दू ध्यावै देहुरा मुसलमान मसीत।
योगी ध्यावै परमपद जहां देहुरा न मसीत।

भावार्थ, हिन्दू मंदिरों में देवता के श्रीविग्रह की प्राण प्रतिष्ठा करके वहाँ उसका ध्यान करते हैं, जबकि मुसलमान मस्जिद में निराकार ईश्वर का चिन्तन करते हैं। किन्तु जोगी के लिए परमपद सर्वत्र है। योगी को मंदिर-मस्जिद सब जगह परमात्मा का सहज ज्ञान उपलब्ध होता है। 'मसीत' शब्द का प्रयोग तुलसीदास ने भी किया है। परन्तु इस शब्द का सबसे पहले प्रयोग साहित्य में गुरु गोरखनाथ ने ही किया। यह देशज शब्द है। हिन्दी साहित्य को यह गोरखनाथ की देन है। तुलसीदास ने इस शब्द का प्रयोग करते हुए कहा था– *धूत कहौ, अवधूत कहौ, रजपूत कहौ, जौलाहा कहौ कोऊ....*

काहू की बेटी से बेटा न ब्याहब। काहू की जात बिगारन सोऊ
मांगि के खइबो, मसीत में सोईबो, लेने को एक न देने को कोऊ। (कवितावली उ. 106)
हिन्दू आषै राम कौं मुसलमान खुदाई
जोगी आषैं अलख हो
तहां राम अछैय न खुदाई।

भावार्थ, हिन्दू राम का चिन्तन करता है। आषै अर्थात् देखता है, जबकि मुसलमान

खुदा का ध्यान करता है, परन्तु जोगी अलख को देखता है। वह राम या खुदा का चिंतन नहीं करता। जोगी तो घट-घट व्यापी अलख का चिन्तन करता है।

इस कविता में 'आषैं' शब्द का प्रयोग देखने के अर्थ में किया है। यह नया शब्द है, जो हिन्दी साहित्य को गुरु गोरखनाथ की देन है। संज्ञा शब्द 'आँख' का प्रयोग क्रिया के रूप में किया गया है। यह गोरखनाथ की शैली है।

गुरु गोरखनाथ ने किसी सम्प्रदाय के साथ भेदभाव नहीं किया। ऐसा नहीं है कि उन्होंने केवल काजियों की आलोचना की। उन्होंने हिन्दू धर्म के अन्य मतों के आडम्बर की भी कड़ी आलोचना की। उन्होंने योगियों को सलाह दी कि वे स्वावलम्बी बनें।

दूधाधारी पर घरिचित
नागा लकड़ी चाहे नित।।
मौनी करै म्यंत्र की आस (सहायक)
विनु गुरु गुदड़ी नहीं बेसास।।

भावार्थ, गुरु गोरखनाथ ने कहा कि योगाभ्यास करने वाले योगी को किसी और पर निर्भर नहीं रहना पड़ता है, जबकि कुछ साधक जो केवल दूध पीकर रहते हैं, उन्हें दूध के लिए दूसरों पर आश्रित होना पड़ता है। इसी प्रकार एक दिगम्बर नागा साधु ठंड से बचने के लिए आग जलाते हैं और उसके लिए लकड़ी चाहिए, जिसके लिए वे दूसरे पर निर्भर रहते हैं। मौनी महात्मा को भी अपनी बात कहने के लिए एक सहायक की आवश्यकता होती है। सहज वैराग तो गुरु की कृपा से प्राप्त होता है। योगी गुरु से मिले ज्ञान की गुदड़ी ओढ़कर स्वावलम्बी होता है। 'गुदड़ी' शब्द का प्रयोग भी साहित्य में गोरखनाथ की देन है। यही 'म्यंत्र' शब्द संस्कृत का मंत्री है, जो गोरखनाथ की देन है।

गुरु गोरखनाथ योगी के जीवन में गुरु को अत्यधिक महत्व देते हैं। उनके बाद के कवियों तुलसीदास और कबीरदास ने भी साधना में गुरु का महत्व स्वीकार किया। तुलसीदास ने तो यहाँ तक कहा....

बिनु गुरु होई कि ज्ञान
ज्ञान की होई विराग विनु
गावहि वेद पुराण सुख कि लहहि हरि भगति विनु। (**रामचरितमानस : उत्तरकांड**)

कबीरदास ने तो गुरु को ही सबसे अधिक महत्व दिया। यहाँ तक कि उन्होंने कहा कि

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े
काको लागू पांय
बलिहारी गुरु आपनो जिन गोविन्द दियो मिलाय।

कबीरदास ने तो स्वामी रामानन्द को गुरु बनाने के लिए वाराणसी में गंगा के घाट पर सीढ़ियों पर लेटकर हठपूर्वक अचानक उनका उपदेश प्राप्त किया। कबीरदास ने हिन्दुओं और मुलसमानों की खुलकर आलोचना की, जबकि गोरखनाथ ने किसी समुदाय की आलोचना नहीं की। केवल समुदाय के व्यक्ति द्वारा किये जा रहे आडम्बर का विरोध

किया।

गुरु गोरख ने केवल नाम लेकर साधना करने को उचित नहीं माना, जबकि तुलसीदास और कबीर दोनों ने कहा कि भगवान का नाम जपना भी पर्याप्त है। तुलसीदास ने कहा-

एहि कलिकाल न साधन दूजा
जोग जप तप व्रत पूजा
रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि
संतत सुनिअ राम गुण ग्रामहि। (**मानस उत्तर दोहा-129**)

तुलसीदास ने तो यह भी कहा-

कलि केवल मल-मूल मलीना
पाप पयोनिधि जनमत मीना
नहि कलि करम न भगति बिबेकु।
राम नाम अवलोकन एकू (**मानस बालकांड दोहा-27**)

तुलसीदास रामनाम को ब्रह्म से भी बड़ा मानते हैं।

ब्रह्म राम तें नामु बड़
बरदायक बरदानि।
रामचरित सत कोटि मह
लिये महेस जिये जानि
नाम प्रसाद संभु अबिनासी
साजु अमंगल मगल रासी।
सुक सनकादि सिद्ध मुनि योगी
नाम प्रसाद ब्रह्म सुख भोगी
नारद जानेउ नाम प्रतापू।
जग प्रिय हरि हरि हर प्रिय आपू
नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू
भगत सिरोमनि भे प्रहलादू।
ध्रुव सगलानि जपेउ हरि नाऊँ
पायउ अचल अनूपम ठाऊँ
सुमिरि पवन सुत पावन नामू
अपने बस करि राखे नामू।
अपतु अजामिल गजु गनिकाऊ
भये मुकुत हरि नाम प्रभाऊ।
कहौ कहां लगि नाम बड़ाई।
रामु न सकहि नाम गुन गाई।
नाम राम को कलप तरू

कलि कल्यान निवासु
जो सुमिरत भयो भांग ते
तुलसी तुलसीदास। (मानस बालकांड दोहा-26)

कुछ विद्वानों का मत है कि भगवान के नाम जप और ब्रह्म के स्वरूप के ध्यान में गोरखनाथ के मत का तुलसीदास ने विरोध किया, परन्तु जहाँ तक मैं समझता हूँ दोनों महापुरुषों के विचारों में वास्तव में कोई भेद नहीं है। तुलसीदास के समय में निर्गुण, निराकार, ब्रह्म का ध्यान करना आम आदमी के लिए कठिन हो गया था। अतः लोगों को सनातन धर्म से जोड़े रखने के लिए तुलसीदास ने नाम जप के सरल मार्ग का अन्वेषण किया क्योंकि अगर कोई व्यक्ति लगातार नाम जपता है, तो वह एक दिन भगवान का ध्यान भी करने लगेगा। वास्तव में गुरु गोरखनाथ और तुलसीदास का उद्देश्य सनातन धर्म की रक्षा करना था। जिसे उन्होंने अपने समय की परिस्थितियों के अनुसार किया।

गोरखनाथ ने इस्लाम तथा अन्य सम्प्रदायों के आडम्बर की भी खुलकर आलोचना की–

काजी मुलां कुराण लगाया,
ब्रह्म लगाया बेदं।
कापड़ी सन्यासी तीरथ भरमाया
न पाया नृबाण पर का भेद। (96)

भावार्थ, मुसलमानों के काजी और मुल्ला कुरान को सब कुछ मानते हैं, जबकि ब्रह्म ज्ञानी वेदों के अध्ययन पर बल देते हैं। तीर्थ यात्री कांवड़ और सन्यासी यात्रा को महत्व देते हैं। परन्तु गोरखनाथ कहते हैं कि इनमें से किसी ने भी परमतत्व का रहस्य नहीं समझा है। वह इन सब में नहीं है, अपितु केवल साधना से प्राप्त हो सकता है। नाथपंथ मानने वालों में मुसलमान योगी भी होते हैं, तो यह कहा जा सकता है कि गोरखनाथ की सलाह व्यर्थ नहीं गयी और भारी संख्या में मुसलमानों ने भी अपना धर्म नहीं छोड़ कर योग का मार्ग अपनाया। इस प्रकार गोरखनाथ ने हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच सद्‌भाव का वातावरण बनाने का प्रयास किया।

गोरख जगायो जोग

कुछ विद्वानों का मत है कि नाथ पंथ की परम्परा वास्तव में बौद्ध धर्म की महायान शाखा के योगमार्गी बौद्धों की परम्परा है, जिसे गोरखनाथ ने शैव रूप दिया। बौद्ध धर्म जब भारत से लुप्त हो गया, तो बौद्ध धर्म के शास्त्रों का प्रचार तथा अध्ययन-अध्यापन भी समाप्त हो गया, किन्तु सिंहल द्वीप अर्थात् श्रीलंका में बौद्ध शास्त्रों के अच्छे पण्डित रह गये। इसीलिए भारत के अवशिष्ट योगमार्गी बौद्धों में श्रीलंका एक सिद्ध पीठ माना जाता रहा। गोरखनाथ के अनुयायी भी सिंहल द्वीप को एक सिद्ध पीठ मानते हैं। उनका विश्वास है कि योगियों को पूर्ण सिद्धि की प्राप्ति के लिए सिंहल द्वीप जाना पड़ता है, जहाँ साक्षात शिव परीक्षा लेकर सिद्धि प्रदान करते हैं। वहाँ पद्मिनी स्त्रियाँ योगियों को लुभाती हैं। ऐसी कथा है कि गोरखनाथ के गुरु मछिन्दरनाथ जब सिंहल द्वीप गये, तो पद्मावती स्त्रियों के जाल में फंस गये। पद्मावती स्त्रियों ने मच्छिदरनाथ को कुंए में डाल रखा था। गोरखनाथ ने वहाँ जाकर अपने गुरु मच्छिन्दरनाथ को स्त्रियों के जाल से मुक्त किया।

कुछ आख्यानों में ऐसा भी उल्लेख मिलता है, जो अधिक विश्वसनीय लगता है कि गोरखननाथ के गुरु मच्छिन्दरनाथ कामरूप अर्थात् असम में स्त्री शासकों के जाल में फँस गये थे और गुरु गोरखनाथ ने वहाँ जाकर उन्हें मुक्त कराया। वर्तमान त्रिपुरा तत्कालीन असम राज्य का हिस्सा है। त्रिपुरा में आज भी गोरखपंथियों की संख्या काफी है। इस छोटे से राज्य में गोरखपंथ के अट्ठारह मन्दिर हैं। उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री और गोरख पीठ के महंत योगी आदित्यनाथ को मानने वाले त्रिपुरा में आज भी भारी संख्या में हैं।

हठयोगी साधना के लिए शरीर के भीतर तीन नाड़ियाँ मानते हैं। मेरूदण्ड या रीढ़ के बायीं ओर इला नाड़ी, दाहिनी ओर पिंगला नाड़ी है। इन दोनों के बीच सुषुम्ना नाड़ी है। स्वरोदय के अनुसार बांये नथुने से जो साँस आती-जाती है, वह इला नाड़ी से होकर जाती

है और दाहिने नथुने से जो साँस आती-जाती है, वह पिंगला से होकर जाती है। यदि साँस कुछ क्षण दाहिने और कुछ क्षण बांये से निकले, तो समझना चाहिए कि वह सुषुम्ना नाड़ी से आ रही है। सुषम्ना नाड़ी ब्रह्म स्वरूप है और उसी में जगत अवस्थित है। बिना इन नाड़ियों के ज्ञान के योगाभ्यास में सिद्धि नहीं मिल सकती है। योगी पहले इला, फिर पिंगला और सुषुम्ना नाड़ी को साधते हैं।

सुषुम्ना के नीचे के भाग में नाभि के नीचे कुंडलिनी होती है। योगी इसी को जगाने का प्रयत्न करते हैं। जागृत होने पर कुन्डलिनी चंचल होकर ऊपर की होकर उन्मुख हो जाती है। जब यह कुन्डलिनी सहस्त्रार या ब्रह्मरंध्र में पहुँच जाती है, तो साधक को सिद्धि प्राप्त हो जाती है। स्वर साधना के क्रम में गुरु गोरखनाथ ने मनुष्य के साँसों की गणना भी की है, जो निम्नलिखित पद में स्पष्ट है :

बैंठा बारै चले अठारै
सूतां तूरै तीस।
कई थन अरंता चौसटि टूटे
क्यों भजिबो जगदीस

भावार्थ, मनुष्य के शरीर में बैठते समय 12, चलते समय 18, सोते समय 30 और अन्य स्थितियों में साँसें 64 बार टूट जाती हैं। इन साँसों के समय परमात्मा का ध्यान भंग हो सकता है। अतः साधक को साँस अर्थात् प्राण वायु का नियंत्रण करना चाहिए। नियंत्रण करने की विधि को निम्नलिखित पद में समझाया गया है :

नासिका अग्रे भूमंडले
अहनिस राहिबा थीरम
माता गरभि जनम न आयवा
बहुरि न पियबा खीरम

भावार्थ, भौंहों के मध्य में चित्त को लगाकर जीवात्मा या योगी स्थित अर्थात् ध्यानस्थ हो जाता है। नासिका के अग्र भाग पर दृष्टि स्थिर रखकर साधक ब्रह्मरंध्र में प्रवेश करके परम शिव का साक्षात्कार कर लेता है। इसके बाद जीवात्मा को जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति मिल जाती है।

गोरखनाथ शरीर में ही ब्रह्म को स्थित मानते हैं। इसी प्रकार ब्रह्म को निर्गुण और निराकार मानने वाले कबीरदास भी शरीर को ही ब्रह्म ज्ञान का माध्यम मानते हैं। कबीरदास ने भी एक रूपक के माध्यम से शरीर और योग का सम्बन्ध निरूपित किया। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि गोरखनाथ द्वारा प्रतिपादित हठयोग को ही आधार बनाकर कबीरदास ने इस पद की रचना की। यहाँ चदरिया अर्थात् चादर शरीर का प्रतीक है।

झीनी झीनी बीनी चदरिया
इंगला ताना, पिंगला नाना
तीन गुण रच दीनि चदरिया

सो चादर सुर नर मुनि ओढ़ी
औढ़िकै मैलि कीनि चदरिया।
दास कबीर जतन करि ओढ़ि
जस की तस धर दीनि चदरिया।

भक्तिकाल के ही एक अन्य समाज सुधारक सन्त रविदास भक्तियोग का निरूपण करते हुए कहते हैं-

कह रैदास तेरी भगति दूरि है
भाग बड़े सो पावै।
तजि अभिमान मेटि आपा पर
पिपिरक है चुनि खावै।
जिहंवा सो ओंकार जप कर
हत्थन सो करि कार।
राम मिलहि घर आइकर
कहि रविदास विचार।
नाम तेरो आरती भजन मुरारे
हरि के नाम बिनु झूठ सकल पसारे।

(**साभार डॉ. शिव प्रकाश शुक्ल, प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, बी.एच.यू.**)

गुरु गोरखनाथ ने भी हठयोग के साधकों को नाम जप की प्रक्रिया बतायी, परन्तु गोरखनाथ इसे अजपा जाप कहते हैं।

ऐसा जाप जपौ मन लाई
सोहं सोहं अजपा गाई
आसण दिढ़ करि धरौ धियानम्
अहनिस सुमिरौ बृहम गियानं।
जाग्रत न्यंद्रा सुलप अहारं
काम क्रोध अहंकार निवारं।
नासा अग्र नियुज्यौ बाई
इड़ा प्युगला मधि समाई
छ सै सहंस इकीसो जाप (21600)
अनहद उपजै आप ही आप।
बंक नालि मैं ऊगै सूर,
रोम-रोम धुनि बाजै जूर
उलटै कंबल सहंसदल वास
भ्रमर गुफा महि जयोति प्रकाश
मछिंद्र प्रताप जती गोरख कहै

परम तत कोई विरला लहै

गोरखनाथ के इस पद में साधक को जहाँ साधना की प्रकृति के बारे में जानकारी दी गयी है, वहीं हठ योग के बारे में सही जानकारी दी गयी है। पहले आसन पर दृढ़ होकर बैठना चाहिए, फिर ब्रह्म का ध्यान करना चाहिए। नींद से बचना चाहिए। सुलभ अर्थात् स्वल्प मतलब थोड़ा भोजन करना चाहिए, इससे नींद नहीं आएगी। फिर नासिका के अग्र भाग में ध्यान लगाकर अजपा जप करना चाहिए। इस प्रकार स्वतः इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना के माध्यम से कुन्डलिनी जाग्रत होकर सहस्त्र दल कमल तक पहुँच जाएगी। तत्पश्चात बंक नली अर्थात् मस्तिष्क की बंद गली में भी प्रकाश हो जाएगा। क्योंकि वहाँ ज्ञान का सूर्योदय हो जाएगा, परन्तु गोरख कहते हैं कि इस स्थिति में बहुत कम लोग पहुँच पाते हैं। गीता के छठवें अध्याय में श्लोक 10 से 17 तक इसी प्रकार की बातें कही गयी हैं। इस प्रकार गोरख का हठयोग गीता के योग से भिन्न नहीं है।

नाथ पंथ की साधना पद्धति का नाम हठ योग है। भारतीय संस्कृति और साधना में योग का बहुत महत्व है। अधिकांश अध्यात्मिक महापुरुषों ने मनुष्य की आध्यात्मिक उन्नति के लिए योग विद्या की सहायता लेना आवश्यक बताया है। योग की अनेक पद्धतियाँ हैं परन्तु उन सबके मूल में प्राचीन योग विद्या ही है। योग के प्रणेता आदिनाथ भगवान शिव माने जाते हैं। गोरखनाथ वही आदि शिव हैं, जिन्होंने योग मार्ग को भ्रष्ट होने से बचाकर सच्चा योग मार्ग फिर से स्थापित किया। इसे ही नाथपंथी हठयोग कहते हैं। 'हठयोग' शब्द यहाँ अपने परम्परागत अर्थ से भिन्न है। 'ह' अर्थात् सूर्य और 'ठ' अर्थात चन्द्र। यह स्वांस की गति का प्रतीक है। नथुनों की दायीं नली जिसे 'ह' या सूर्य कहते हैं, पिंगला नाड़ी है। जबकि बांयी ओर इड़ा नाड़ी है। कबीर दास इसे इंगला कहते हैं।

आदिनाथ के बाद भगवान कृष्ण को भी योगेश्वर कहा जाता है। बौद्ध मत ने भी अष्टांग योग प्रचलित किया। योगशास्त्र के बारे में सबसे व्यवस्थित ग्रन्थ महर्षि पतंजलि प्रणित योगदर्शन है। इसमें भी योग के 8 अंग बताये गये हैं। जो इस प्रकार हैं। यम नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। यह पतंजलि का योग दर्शन है। परन्तु बौद्धों में अष्टांग योग अलग है, जो इस प्रकार है- 1.सम्यक दृष्टि, 2.सम्यक संकल्प, 3. सम्यक वाक, 4.सम्यक क्रमांक, 5.सम्यक आजीव, 6.सम्यक व्यायाम, 7.सम्यक आहार, 8. सम्यक समाधि। बौद्धों के अष्टांग मार्ग के अतिरिक्त कई अन्य प्रकार के योगों का उल्लेख है, जैसे क्रिया योग, कर्म योग, राज योग इत्यादि। परन्तु नाथ सम्प्रदाय का आधार 'हठ योग' है। इसकी पूरी प्रक्रिया गुरु गोरखनाथ ने योगियों को समझायी है। 'हठ योग प्रदीपिका' और 'शिव संहिता' में हठ योग का पूरा विवरण दिया हुआ है। ये दोनों ही पुस्तकें पाणिनी ऑफ़िस, इलाहाबाद ने प्रकाशित की है। नाथ पंथ के अनुसार महाकुण्डलिनी नामक शक्ति है, जो पूरी सृष्टि में व्याप्त है। व्यष्टि या व्यक्ति में व्यक्त होने पर इसी को कुण्डलिनी कहते हैं। मनुष्य की पीठ में मेरुदण्ड है। यह जहाँ पायु और उपस्थ के मध्य भाग में मिलता है, वहीं एक स्वयंभू लिंग है जो एक त्रिकोण

में स्थित है। इसे अग्नि चक्र भी कहते हैं। कुंडलिनी एक सर्पिणी की तरह है, जो स्वयंभू लिंग को साढ़े तीन वलय वृत्तों में लपेटकर विद्यमान है। इसके ऊपर चार दलों का एक कमल है, जिसे मूल आधार चक्र कहते हैं। फिर इसके ऊपर नाभि के पास स्वाधिष्ठान चक्र है, जो छह दलों के कमल के आकार का है। इस चक्र के ऊपर मणिपुर चक्र है। इसके भी ऊपर हृदय के पास अनाहत चक्र है। ये दोनों दस व बारह दल के कमल के समान हैं। इसके ऊपर कन्ठ के पास विशुद्धाख्य चक्र है, जिसका आकार 16 दल के कमल के समान है। इसके ऊपर भौहों के बीच आज्ञा चक्र है, जिसमें दो ही दल हैं। यही छह चक्र हैं, इनका भेदन करने के बाद मस्तक में शून्य चक्र है, जहाँ पहुँचना जीवात्मा का लक्ष्य है। इसे ही सहस्त्रार कहते हैं। यहीं गगन मण्डल है। इसी को कैलाश भी कहते हैं।

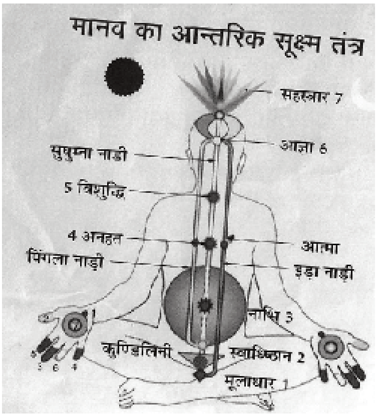

''मेरू दण्ड में प्राण वायु को वहन करने वाली कई नाड़ियाँ हैं। मुख्य है इड़ा, पिगंला और सषुम्ना। सुषुम्ना के भीतर भी कई सूक्ष्म नाड़िया हैं और उसके भीतर व्रजा चित्रिणी है, उसके भीतर ब्रह्म नाड़ी है। इस प्रकार पाँच नाड़ियाँ हो गयीं। वैसे हठ योग प्रदीपिका के अनुसार शरीर में बहत्तर हजार नाड़ियाँ हैं परन्तु एक मात्र सुषुम्ना ही शांभवी नाड़ी है। कबीरदास ने इन नाड़ियों मे से इड़ा को गंगा, पिंगला को जमुना, और सुषुम्ना को सरस्वती नाड़ी कहा है।''

साधक योगी नाना प्रकार की साधना द्वारा कुंडलिनी शक्ति को ऊर्ध्वमुखी करता है। साधारण मनुष्यों मे यह अधोमुखी रहती है। कुंडलिनी जब ऊपर की ओर उठती है, तो स्फोट होता है, जिसे नाद कहते हैं, इससे प्रकाश होता है। प्रकाश का ही व्यक्त रूप है महाबिन्दु। यह बिन्दु तीन प्रकार का होता है- इच्छा, ज्ञान और क्रिया। इन्हीं को योगी लोग सूर्य, चन्द्र और अग्नि कहते हैं और कभी-कभी ब्रह्मा, विष्णु और शिव भी कहते हैं। मनुष्य दिन भर में 21, 600 बार साँस लेता है। जब कुण्डलनी जाग जाती है, तो साधना

जगत में व्याप्त स्वर सुनाई देने लगता है। साधना की प्रक्रिया में शरीर के भीतर समुद्र गर्जन, मेघ गर्जन, भेरी और झर्झर आदि का शब्द सुनाई देता है। फिर मर्दल, शंख और घंटा की हल्की आवाज़ सुनाई देती है। फिर किंकिणी, वंशी, भ्रमर और वीणा की मधुर ध्वनि सुनाई देती है परन्तु ज्यों-ज्यों चित स्थिर हो जाता है, इन ध्वनियों का सुनाई देना बन्द हो जाता है। शास्त्रों मे जिसे प्रणव या ओंकार कहते हैं, वही शब्द तत्व है। वैयाकरणों ने इसे स्फोट कहा है। स्फोट को ही 'शब्द ब्रह्म' कहा जाता है। गोरखनाथ के शिष्य भ्रतृहरि शब्द को ही 'ब्रह्म' मानते हैं।

हठयोग में शरीर की शुद्धि पर विशेष बल दिया गया है। इसके लिए कई क्रियाएं हैं– धौति है, वास्ति है, नेति है, त्राटक है, नौलि और कपाल भाति क्रियाएं हैं। इन्हें षट्कर्म कहते हैं। इसके बाद आसन, मुद्रा, प्राणायाम और समाधि है। सिद्धासन सबसे श्रेयस्कर आसन है। इसमें साधक नाभि के नीचे मेढज स्थान पर बांयी एड़ी और उसके ऊपर दाहिनी एड़ी रखता है। ठुड्डी स्थित होती है। साधक स्थिर होकर भ्रूमध्य में ध्यान लगाता है। (**हठ योग 1-37**)

प्राणायाम तीन प्रकार का होता है। रेचक– सांस छोड़ना, पूरक– सांस का भरना और कुंभक– सांस का रोकना। असल प्राणायाम कुंभक है, जब यह सिद्ध हो जाता है, तो इसे 'केवल' कहते हैं। इसी की सहायता से कुण्डलिनी जाग्रत होती है। योगी के लिए खेचरी मुद्रा बहुत महत्वपूर्ण है। यह बिरलै ही सिद्ध होती है। इसमें योगी जीभ को उलट कर कपाल कुहर में प्रविष्ट करता है और इसकी दृष्टि भौंहों मे निबद्ध होती है। इसी मुद्रा का विशेष रूप एवं चक्र भी कहलाता है। ब्रहम् रन्ध्र के सहस्त्रदल कमल के मूल में योनि नामक त्रिकोणात्मक शक्ति का केन्द्र है। वही चन्द्रमा का स्थान है। इसमें से सदा अमृत झरता रहता है। खेचरी मुद्रा में योगी की ऊर्धमुखी जीभ उसी अमृत रस का पान करती रहती है। यही अमृत सोम रस है। इसका पान करने वाला योगी अमर हो जाता है। राजयोग, समाधि, उन्मनी, मनोन्मनी, अमरत्व, लय, तत्व, शून्य, अशून्य, परमपद, अमनस्क, अद्वैव, निरालंब, निरंजन, जीवन मुक्ति, सहजा और तूर्या यह सब एक ही समाधि के वाचक शब्द हैं। हठ योग, दीपिका (4-34) यह अवस्था है, जब मन और प्राण एक ही हो जाते हैं। आकाश में जैसे कोई सूना घड़ा रखा हो–

अंतः शून्यो बहिः शून्यः कुंभ इवाम्बरे,
अंतः पूर्ण बहिः पूर्णो
कुंभ पूर्ण इवार्णवे।

कबीर दास ने इसी से प्रभावित होकर कहा –

जल में कुंभ, कुंभ में जल है।
बाहर भीतर पानी।
फूटा कुंभ जल जलही समाना।
यह तथ कहो गियानी।

'हठयोग' में मानव शरीर की संरचना का वैज्ञानिक ढंग से अन्वेषण किया गया है। पिंगला और सुषुम्ना नाड़ियों को चिन्हित करने के साथ ही शक्ति केन्द्रों अर्थात् चक्रों का भी पता लगाया गया है। इन्हीं चक्रों से होकर कुंडलिनी जाग्रत होने के बाद सहस्त्रार तक पहुँचती है। इसी सन्दर्भ में प्रानिक हिलिंग प्रणाली का उल्लेख भी समीचीन है। इस संबंध में फिलीपीन्स के एक मशहूर एलोपैथी चिकित्सक मास्टर चोआ कोक सुई ने एक पुस्तक लिखी है- 'मिरेकिल्स थ्रू प्रानिक हीलिंग'। यह पुस्तक बैंगलूरू स्थित विश्व प्रानिंक हीलिंग फाउंडेशन ने प्रकाशित की है। डॉ. चोआ कोक सुई ने लिखा है कि अपने अनुभव के आधार पर वे कह सकते हैं कि कई बार मरीज जब एलोपैथी दवाओं के बाद भी रोग से मुक्त नहीं हुआ, तो उन्होंने उन मरीजों का उपचार प्रानिक हीलिंग से किया और वे मरीज ठीक हो गये। प्रानिक हीलिंग में शरीर के विभिन्न भागों में स्थित शक्ति केन्द्र चिन्हित किये गये हैं। इनके अनुसार मानव शरीर में कुल 11 चक्र या शक्ति केन्द्र हैं, जिनकी सहायता से उपचार किया जाता है।

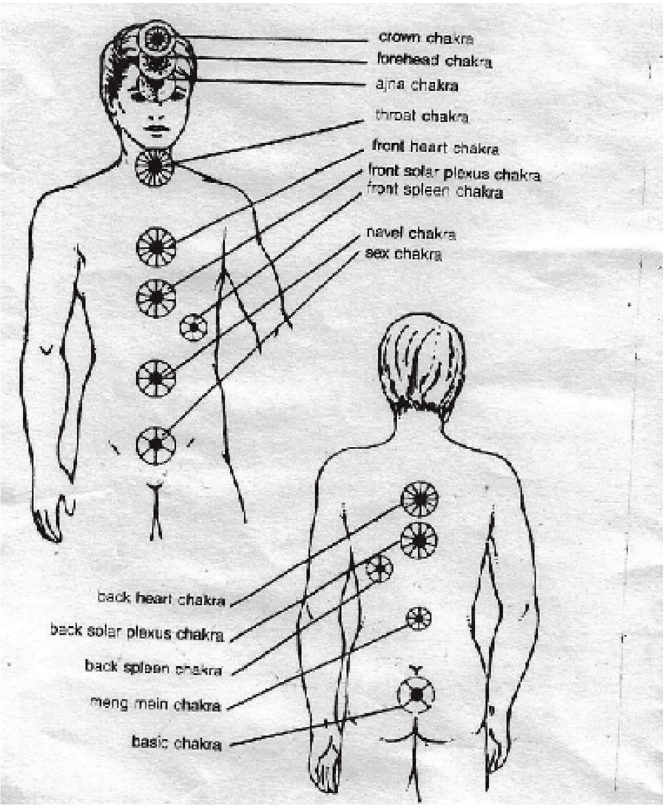

'हठयोग' में 6 चक्रों का ही उल्लेख है। 'प्रानिक हीलिंग' में निम्नलिखित 11 चक्रों का उल्लेख है।

1. बेसिक चक्र या मूलाधार चक्र
2. सेक्स चक्र अर्थात् प्रजनन चक्र
3. मेनमिन चक्र
4. नवेल चक्र
5. स्पिलिन चक्र
6. सोलर फ्लैक्सस चक्र
7. हार्ट चक्र
8. थ्रोट चक्र
9. आज्ञा चक्र
10. फोरहेड चक्र
11. क्राउन चक्र

मूलाधार चक्र

यह चक्र रीढ़ की हड्डी के मूल उपस्थ में स्थित है। यह चक्र हृदय और प्रजनन अंगों को प्रभावित करता है। इस चक्र के ठीक से काम नहीं होने करने के कारण एलर्जी, कामा, रक्त विकार, घाव का धीरे-धीरे भरना, निद्रा की कमी आदि बीमारियाँ होती हैं।

प्रजनन चक्र

यह चक्र मूलाधार चक्र के ऊपर होता है। यह चक्र प्रजनन अंगों और ब्लाडर को शक्ति प्रदान करता है। इस चक्र के ठीक से काम नहीं करने से प्रजनन से संबंधित बीमारियाँ होती हैं।

मेनमिन चक्र

यह चक्र नाभि के पीछे स्थित है। इस चक्र का कार्य रीढ़ की हड्डी में रक्त को प्रवाहित करना है। यह चक्र किडनी और अन्य अंगों को नियंत्रित करता है। यह चक्र रक्तचाप को भी नियंत्रित करता है। इसके खराब होने से किडनी की समस्या होती है।

नवेल चक्र

चह चक्र नाभि पर स्थित है। यह छोटी आँत, बड़ी आँत और एपेन्डिक्स को शक्ति प्रदान करता है। इसके खराब होने से महिलाओं में बच्चे को जन्म देते समय दिक्कत आती है।

स्पिलिन चक्र

यह पेट में बायीं तरफ़ स्थित होता है। इससे प्लीहा को शक्ति मिलती है।

सोलर फ्लैक्सस चक्र

मनुष्य के शरीर में यह दो स्थानों पर होता है। एक चक्र रीढ़ से लगी पसली की हड्डियों के बीच है, जबकि दूसरा चक्र बीच में होता है। यह चक्र लीवर, पैनक्रियास को शक्ति

प्रदान करता है। यह रक्त की गुणवत्ता को प्रभावित करता है।

हार्ट चक्र

यह भी दो स्थानों पर होता है। एक हार्ट चक्र सीने के मध्य में होता है, जो हृदय को नियंत्रित करता है, जबकि दूसरा हृदय के पृष्ठ भाग में स्थित है।

थ्रोट चक्र

यह गले के मध्य में स्थित है। इससे थाइराइड और पैरा थाइराइड तथा गले को शक्ति मिलती है।

आज्ञा चक्र

यह दोनों भौहों के बीच स्थित है। यह मनुष्य की पिटूटरी लैंड को शक्ति प्रदान करता है। इसके ठीक से काम नहीं करने पर कैंसर, एलर्जी और अस्थमा जैसी बीमारियाँ होती हैं।

फोरहेड चक्र

यह मस्तिष्क के मध्य में स्थित है। इससे स्नायु तंत्र को शक्ति मिलती है।

क्राउन चक्र

यह मस्तिष्क के शीर्ष पर स्थित है। इसके ठीक से काम नहीं करने पर मस्तिष्क संबंधी बीमारियाँ होती हैं।

क्राउनिक हीलिंग सिस्टम से डॉ. सुई ने कई मरीजों का सफल उपचार करने का दावा किया है। इन्दिरा नगर, लखनऊ निवासी हमारे मित्र श्री एम.सी. जायसवाल ने मेरे सामने ही एक मरीज को किसी उपकरण के बिना केवल ध्यान लगाकर उसके शरीर के विभिन्न अंगों के बारे में जानकारी दी। उन्होंने एक मरीज को देखकर बताया कि इसे रक्तचाप की बीमारी होने की संभावना है। इसके अलावा उसकी आँखों की ज्योति भी प्रभावित हो सकती है। इस सिस्टम का 'हठयोग' से तो कोई सीधा संबंध नहीं है लेकिन इतना निश्चित है कि मानव शरीर के विभिन्न हिस्सों में कुछ ऐसे चक्र हैं, जिन्हें नियंत्रित करके शरीर को स्वस्थ रखा जा सकता है। हठ योग के प्रवर्तक गोरखनाथ ने भी योगियों को शरीर के विभिन्न चक्रों को स्वस्थ रखने की सलाह दी है।

सहजयोग ध्यान

आध्यात्मिक गुरु माता निर्मला देवी ने भी लोगों को स्वस्थ रहने के लिए सहजयोग ध्यान करने की सलाह दी है। उनके अनुसार कुंडलिनी को जागृत करके रोगों से मुक्ति पायी जा सकती है। सहजयोग ध्यान में भी मानव शरीर में शक्ति केन्द्रों को चिन्हित किया गया है, उनके अनुसार मानव शरीर में रीढ़ की हड्डी में सुषुम्ना नाड़ी, इड़ा और पिंगला नाड़ी के साथ सात चक्र होते हैं। सुषुम्ना नाड़ी में सबसे नीचे मूलाधार, उसके ऊपर स्वाध्ष्ठिान और उसके ऊपर नाभि चक्र होते हैं, जबकि हृदय के पास अनहत और गर्दन के पास विशुद्धि चक्र, भौहों के बीच आज्ञा चक्र और सबसे ऊपर सहस्त्रार चक्र होता है।

सहजयोग ध्यान में चक्रों और नाड़ियों का विवरण लगभग वैसा ही है, जैसा हठ योग में गुरु गोरखनाथ ने बताया है। प्रो. पी. एन. सोमानी ने जनसंदेश टाइम्स, लखनऊ (09 अप्रैल, 18) में प्रकाशित अपने एक लेख में कहा कि विपश्यना साधना में इस क्षण का जो सत्य है, जैसा है, उसे ठीक वैसा ही देखना और समझना विपश्यना है। विपश्यना की सिद्धि कठिन अवश्य है, पर असंभव नहीं। आज भी वाराणसी के पास सारनाथ में और नेपाल में अनेक स्थानों पर विपश्यना के बारे में लोगों को प्रशिक्षण दिया जाता है।

विपश्यना ध्यान की एक और विधा है, जो बौद्ध तांत्रिकों ने विकसित की है। यह भी ठीक वैसा ही है, जैसा हठयोग है। इस विधा पर भी गुरु गोरखनाथ का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है।

योग विद्या की सभी विधियों पर महर्षि पंतजलि द्वारा प्रणीत योग सूत्र का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। अब तो इसका इतना महत्व हो गया है कि यूनेस्को ने भी इसे मान्यता प्रदान करते हुए 21 जून को अतंर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाने की घोषणा की है। ऐसा माना जाता है कि महर्षि पंतजलि ने योग सूत्रों की रचना ईसा से दो सौ वर्ष पूर्व की थी, परन्तु यह धारणा सही नहीं लगती है। बौद्ध धर्म में अष्टांग योग का उल्लेख है, जिस पर पंतजलि के योग का प्रभाव दिखाई देता है। भगवान बुद्ध का जन्म ईसा से लगभग 5 सौ वर्ष पहले हुआ था। अतएव महर्षि पंतजलि का जन्म पाँच सौ ईसा पूर्व से पहले होना चाहिए। गीता में भी कई प्रकार के योगों का उल्लेख है। गीता में कर्म योग का विशेष उल्लेख है। इसका शरीर के चक्रों से कोई संबंध नहीं है। गीता में क्रिया योग का भी वर्णन है। आधुनिक काल में क्रिया योग को शास्त्रीय रूप देने में परमहंस योगानन्द का विशेष योगदान है।

इसमें भी मानव शरीर के विभिन्न अंगों में स्थित केन्द्रों और नाड़ियों का उल्लेख है। योगदा सिस्टम में भी शरीर की शुद्धि और मन को स्वस्थ रखने पर बल दिया गया है। परमहंस योगानन्द ने मनुष्य की आध्यात्मिक उन्नति के लिए यौगिक क्रियाओं पर विशेष बल दिया है।

गोरखनाथ ने जिस हठयोग का उपदेश दिया, वह प्राचीन भारतीय परम्परा से बहुत भिन्न नहीं है। प्राचीन भारतीय शास्त्रों मे हठ योग सामान्यतः प्राण-निरोध-प्रधान साधना थी। सिद्ध सिद्धान्त पद्धति में 'ह' का अर्थ सूर्य बताया गया है और 'ठ' का अर्थ चन्द्र। सूर्य और चन्द्र के योग को हठयोग कहते हैं।

हकारः कथितः सूर्यः
ठकारः चन्द्र उच्यते।
सूर्याचन्द्रमसयोः योगात्
हठयोगो निगद्यते।

इस श्लोक की व्याख्या कई प्रकार से हो सकती है। ब्रह्मानन्द के मतानुसार, सूर्य से तात्पर्य प्राण वायु का है और चन्द्र से अपान वायु का। इन दोनों के योग अर्थात् प्राणायाम से वायु का निरोध करना ही हठयोग है। दूसरी व्याख्या यह है कि इड़ा और पिंगला नाड़ियों

को रोककर सुषुम्ना मार्ग से प्राणवायु के संचरित करने को भी हठयोग कहते हैं। ऐसी मान्यता है कि हठयोग करने से सिद्धि शीघ्र मिल जाती है। योग-स्वरोदय में हठयोग के दो भेद बताए गये हैं। प्रथम में आसन, प्राणायाम तथा धौतिआदि षट्कर्म का विधान है, जबकि दूसरे में नासिका के अग्र भाग में दृष्टि निबद्ध कर आकाश में कोटि सूर्य के प्रकाश का स्मरण करना चाहिए और श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण रंगों का ध्यान करना चाहिए। गोरखनाथ की एक 'सबदी' में इसी की ओर संकेत किया गया है।

नासिका अग्रे भूमंडले
अहनिस रहिबा धीरं।
माता गरभि जनम न आयबा
बहुरि न पीयबा पीरं (275)

हठयोग की दो विधियाँ बतायी गयी हैं। एक तो गोरखनाथ के पूर्ववर्ती मारकण्डेय आदि ने उपदेश दिया था और दूसरी गोरखनाथ ने उपदेश दिया। पहली विधि में पातंजल योग के सभी आठ अंगों को स्वीकार किया गया है, जबकि दूसरी विधि में केवल अन्तिम छह अंगों को।

शरीर में तीन ऐसी चीज़ें हैं, जो परम शक्तिशाली हैं- 1. बिन्दु अर्थात् शुक्र 2. वायु 3. मन। ब्रह्मचर्य के द्वारा बिन्दु अर्थात् शुक्र को ऊर्ध्वमुख किया जाता है, तभी सहज समाधि मिलती है। नाड़ी के सिद्ध होने से बिन्दु स्थिर और ऊर्ध्वमुख होता है। नाड़ी शुद्धि के लिए षट्कर्म–धौति, बस्ति, नेति, त्राटक, नीलि और कपाल भाति का उल्लेख है। नाड़ी शुद्धि के बाद प्राणादि वायुओं का शमन सहज हो जाता है। हठ योगी प्राणवायु को निरोध करके कुण्डलिनी को जगाता है। कुण्डलिनी क्रमशः षड्चक्रों का भेदन करते हुए सातवें अन्तिम चक्र में सहस्त्रार से मिलती है और योगी को सिद्धि प्राप्त हो जाती है। षट्चक्रों की स्थिति इस प्रकार है- 1. मेरूदण्ड के मूल में मूलाधार चक्र, 2. मेरूदण्ड में स्वाधिष्ठान चक्र 3. नाभि के पास मणिपुर चक्र 4. हृदय के पास अनाहत चक्र 5. कण्ठ के पास विशुद्धारूप चक्र और भौहों के पास आज्ञा चक्र। हठयोग (5/18) के अनुसार मानव शरीर में प्राण वायु को वहन करने वाली नाड़ियों की संख्या 72 हजार है परन्तु सुषुम्ना जिसे शांभवी नाड़ी कहते हैं, सबसे महत्वपूर्ण है।

द्वासप्ततिसहस्त्राणि
नाड़ी द्वाराणि पंजरे।
सुषुम्ना शांभवी शक्तिः
शेषाः अस्ति निरर्थकाः

गोरखनाथ द्वारा प्रतिपादित हठ योग इतना सहज नहीं है। इसमें गुरु की भूमिका महत्वपूर्ण है। परन्तु यह सच है कि गोरखनाथ ने प्राचीन भारतीय योग को वैज्ञानिक आधार पर प्रतिष्ठापित करते हुए इसे समाज में प्रतिष्ठा दिलायी। उन्होंने उस समय योग के नाम पर हो रहे व्यभिचार को समाप्त करके सात्विक योग अर्थात् हठ योग का मार्ग प्रशस्त

किया और सनातन धर्म की रक्षा की। हठ योग की मूल बातें गीता में वर्णित योग से भिन्न नहीं हैं। गोरखनाथ के हठ योग और गीता के योग की तुलनात्मक व्याख्या अलग अध्याय में की गयी है।

सिद्ध सिद्धान्त पद्धति के अनुसार जीवात्मा के स्थूल शरीर की उत्पत्ति ऋतुकाल में नर और नारी के संभोग या संयोग से स्त्री की योनि में रज और विन्द-वीर्य के एक होने पर स्थूल शरीर का निर्माण होता है। गोरखनाथ कहते हैं कि वीर्य और रज का मिश्रित द्रव पहले दिन कुछ गाढ़ा-सा रहता है। सात दिन की अवधि में यह बुलबुले का आकार धारण कर लेता है। 15 दिनों में यह गोल आकार का पिण्ड हो जाता है। एक माह में एक स्थूल ठोस कठिन-सा हो जाता है और दो माह में गोलाकार पिण्ड में सिर बनता है, तीन माह में उसमें हाथ पैर आदि अंग बनते हैं। चार माह की अवधि में नेत्र, कान, नाक, मुख, लिंग, भुजा के आकार बन जाते हैं। पाँचवें मास में पीठ और पेट तथा छठे मास में नाखून, बाल और सातवें माह में चेतना का समस्त अंगो में संचार होता है। आठवें मास में सभी लक्षण पूरे हो जाते हैं। नौवें मास में जीवात्मा को अपने स्वरूप का ज्ञान होता है। पिछले जन्म के कर्मों और दुखों का स्मरण हो जाता है। जीव परमात्मा से प्रार्थना करता है कि मुझे कृपा करके गर्भावस्था की नरक यातना से मुक्त कीजिए। दसवें माह में जन्म लेते समय माँ की योनि से स्पर्श होते ही जीवात्मा अज्ञानी बालक के रूप में जन्म लेता है। वीर्य और रज में जिसकी अधिकता होती है, सन्तान उसी वर्ग का पैदा होता है। दोनों के बराबर होने पर नपुंसक सन्तान पैदा होती है। संभोग या संयोग काल में चिंतित रहने पर संतान अंधी, कुबड़ी, बौनी, नेत्रहीन होती है। वीर्य के रुक-रुककर गिरने से एक से अधिक सन्तानें पैदा होती हैं। इतनी सारी जानकारी जो आधुनिक विज्ञान से मेल खाती हैं, गोरखनाथ ने अध्यात्म के आधार पर प्राप्त की। इससे स्पष्ट है कि गोरखनाथ अद्भुत आध्यात्मिक शक्तियों के धनी थे।

हठ योग वास्तव में प्राण वायु के निरोध को कहते हैं और राज योग मन के निरोध को, किन्तु योग शिखोपनिषद् में चार प्रकार के योग बताये गये हैं- मंत्र योग, हठ योग, लय योग, राज योग। जीवात्मा के निःश्वास-प्रश्वास में 'ह' और 'स' वर्ण उच्चरित होते हैं। हकार के साथ प्राण वायु बाहर और सकार के साथ भीतर जाता है। इस प्रकार जीव अपने आप 'ह', 'स' मंत्र का जप करता है। गुरु वाक्य जान लेने पर यही मंत्र उल्टी दिशा में सोहम् सोहम् हो जाता है। इस मंत्र के सिद्ध होने पर हठ योग के प्रति विश्वास पैदा होता है। इसके बाद लय योग प्रारंभ होता है, तब पवन स्थिर हो जाता है और आत्मानन्द का सुख प्राप्त होता है। इस लय योग की साधना से भिन्न अन्तिम बार राजयोग है। योनि के महाक्षेत्र में जपा और बन्धुक फूलों के समान रज रहा करता है। यह देवी तत्व है। इस रज के साथ रेत का जो योग है, वही राजयोग है। इससे अणिमा आदि सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। रज और रेतस शब्दों का प्रयोग आध्यात्मिक अर्थ में किया गया है।

योनिमदमे महाक्षेत्रे जपा बन्धूकिभिन्नम्
रजो वसति जन्तूनां देवी तत्वं समावृत्तम्।
रजसो रेतसो योगात् राजयोगः इति स्मृतः।
अणिमादि पदं प्राप्य राजते राजयोगतः। (136-137)

सिद्धि प्राप्त करने के लिए छह चक्रों के अलावा 16 आधार और 2 लक्ष्य तथा व्योम पंचम का ज्ञान होना आवश्यक है।

जीवात्मा के जन्म-मरण का कारण यह है कि किसी अनादिकाल में शिव और शक्ति क्रमशः स्थूलता की ओर अग्रसर हुए और अलग हो गये। शिव शक्ति जिस दिन समरस होकर एक हो जाएंगे, उसी दिन समस्त सृष्टि समाप्त हो जाएगी। जीवात्मा के शरीर में शक्ति कुंडलिनी के रूप में सुप्तावस्था में है और शिव सहस्रार में विराजमान है। दोनों का मिलन ही सिद्धि या जीवात्मा की मुक्ति है।

हठ योग केवल आध्यात्मिक विद्या नहीं है, यह वैज्ञानिक भी है। इण्डोनेशिया के एक वैज्ञानिक जो एलोपैथी के चिकित्सक हैं, ने प्राणिक हीलिंग पद्धति का विकास किया है। इस पद्धति के अनुसार असाध्य एवं लाइलाज रोगों की चिकित्सा शरीर में स्थित विभिन्न चक्रों को शक्ति देकर की जाती है। हमारे एक मित्र लखनऊ के गोमतीनगर के निवासी डॉ. महेन्द्र कुमार त्रिपाठी से जब मैंने यह बात जानने की कोशिश की और उनसे पूछा कि क्या मानव शरीर में वास्तव में विभिन्न चक्र होते हैं, तो उन्होंने कहा कि उन्होंने स्वयं प्राणिक हीलिंग पद्धति का अध्ययन किया है। यहाँ तक कि सुदूर स्थित रोगी का भी इलाज किया जा सकता है। इससे असाध्य रोगों का भी उपचार किया जाता है। उन्होंने यह भी कहा कि शरीर में इस प्रकार के चक्र होते हैं या नहीं, इसके बारे में वे कुछ नहीं कह सकते परंतु मृत व्यक्तियों के शव परीक्षण के बाद देखा गया है कि प्राणिक हीलिंग में शरीर के जिन स्थानों पर चक्र होना बताया गया है, वहाँ शव में कुछ पदार्थ मांस का लोथड़ा या अन्य चीजें होती हैं। डॉ. त्रिपाठी ने कहा कि हो सकता है, यही पदार्थ चक्र हों, परंतु एलोपैथी में इस प्रकार के चक्रों की मान्यता नहीं है।

अलख निरंजन

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपनी पुस्तक 'कबीर' में कहा है कि ''भक्तिकाल के दौरान प्रायः सभी सम्प्रदायों ने 'निरंजन' शब्द का उल्लेख किया है। नाथ पंथ में भी निरंजन शब्द बहुत प्रचलित है। नाथ पंथ के अलावा कई अन्य पंथ भी थे, जो निरंजन शब्द से अपने को जोड़ते थे, किन्तु वर्तमान में ये सारे मत लुप्त हो गये हैं या किसी अन्य पन्थ में विलीन हो गये हैं। निरंजनी साधुओं का एक समुदाय राजस्थान में है। इस सम्प्रदाय के प्रवर्तक स्वामी मिरानंद निर्गुण निरंजन भगवान के उपासक थे। परन्तु आजकल इनके अनुयायी रामानन्दी वैरागियों के अनुसार राम-सीता के उपासक हो गये हैं। ओड़ीसा में यह निरंजन पथ अब भी जी रहा है। बंगाल और बिहार के पूर्वी जिलो में आज भी एक सम्प्रदाय है, जिसके देवता निरंजन या धर्मराज हैं।''

नाथ पंथ में 'निरंजन' का बड़ा महत्व है। हठ योगी जब नादानुसंधान में सफल हो जाता है, तो उसके समस्त पाप क्षीण हो जाते हैं और वह निरंजन में विलीन हो जाता है।

सदा नादानुसंधानात् क्षीयते पापसंचयः
निरंजने विलीयते निश्चितं चित्र मारूती। (**हठ योग : 4-10**)

नाथ पंथ के अनुसार निरंजन ही सृष्टि, स्थिति और प्रलय का कारण है। हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार गोरखनाथ के योग मार्ग में वेदान्त, वेद, अद्वैत और निर्गुण ब्रह्म को बहुत महत्व नहीं दिया गया है। नाथ पंथी सबसे ऊपरी सहस्त्रार चक्र को शून्य चक्र कहते हैं। इस चक्र में पहुँचने पर जीवात्मा सभी प्रकार के द्वन्दों से ऊपर उठ जाता है। शून्यावस्था में आत्मा को किसी प्रकार की अनुभूति नहीं होती है। न सुख की, न दुख की, न राग की, न द्वेष की, न हर्ष की, न अमर्ष की। योगियों के पारिभाषिक शब्दों में उल्टी बानी को प्रभावशाली और अद्‌भुत बना देने की शक्ति होती है। 'हठ योग प्रदीपिका' और 'शिव संहिता' में उपमान रूप में कई विषयों के संकेत दिये गये हैं, जैसे चित्त के लिए भ्रमण,

अग्नि। मन के लिए मत गजेन्द्र, खग और पारद इत्यादि। कबीर दास की उलटबांसियों में इन शब्दों का बाहुल्य है। बाद में निरंजन शब्द मन का वाचक हो गया। निरंजन अर्थात् निष्कलुष ही सभी घट में समाया हुआ है।

कबीर दास ने भी निरंजन शब्द का प्रयोग किया है। उन्होंने इसके साथ शून्य और सहज समाधि को भी जोड़ दिया है। परन्तु कबीर की शून्य और सहज समाधि योगियों की सहज समाधि से भिन्न है। कबीर दास उस योगी को अपना सारा जप-तप देने की बात करते हैं, जो उन्हें सहजावस्था का सुख-रामरस की एक बूँद चखा दे। पूर्वी उ. प्र. में साधुओं की जमात के भंडारे में नमक को 'रामरस' कहते हैं। यह कैसे हुआ, अनुसंधान का विषय है। भाषा के विकास में शब्दों के अर्थ ऐतिहासिक और सामाजिक कारणों से बदल जाते हैं। कई बार शब्दों के अर्थ ही उलट जाते हैं। परन्तु यह अलग विषय है। गुरु गोरखनाथ निरंजन को अलख निरंजन कहते हैं। अलख, जो दिखाई नहीं देता है बल्कि उसका अनुभव किया जाता है। इसी को गुरु गोरख दासणा भी कहते हैं। अलख निरंजन ही गुरु गोरखनाथ का परम तत्व परमात्मा है।

'बसती न सुन्यं, सुन्यं न बसती अगम अगोचर ऐसा'।

''गगन शिखर महिं बालक बोले नाँव दरहुगे कैसा''

परम तत्व परमात्मा अगम और अगोचर हैं। वह न तो सत् है, न असत् है अर्थात् भाव और अभाव दोनों से परे है। वह बालक की तरह निष्पक्ष और निर्मल है। वह गगन के शिखर पर स्थित है। उसका कोई नाम रूप नहीं है।

जिस प्रकार बालक अपने अनुभव को व्यक्त नहीं कर सकता है, उसी प्रकार परमात्मा अव्यक्त है। वह गूंगे का गुण है। महात्मा बुद्ध से जब उनके शिष्यों ने पूछा कि परमात्मा है, तो बुद्ध मौन हो गये। उन्होंने कुछ नहीं कहा। तात्पर्य यह है कि परमात्मा की सत्ता के बारे में कुछ कहा नहीं जा सकता है। कुछ लोग इसका अर्थ लगाते हैं कि बुद्ध निरीश्वरवादी थे। परन्तु मेरी समझ में ऐसा समझना बुद्ध के प्रति अन्याय होगा। भगवान बुद्ध का अभिप्राय शायद यह था कि शिष्यों तुम इस विवाद में मत पड़ो कि ईश्वर है कि नहीं, तुम साधना करो। गुरु गोरखनाथ भी यही कहते हैं। ये निरीश्वरवादी नहीं हैं। परमात्मा तो मन वाणी को अगम अगोचार, सो जाने जो पावे, नाम रूप गुण राशि जुगत बिन निरालंब मन चकृत धावे। सूरदास के इस कथन पर गुरु गोरखनाथ का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। मीरा बाई जब कहती हैं कि गगन मण्डल पर सेज पिया की, 'किस बिध मिणला होय' तो उन्हें गगन शिखर पर विद्यमान गुरु गोरखनाथ के बालक से ज्ञान मिला होगा। गुरु गोरखनाथ का परमात्मा विशुद्ध रूप से वैदिक ब्रह्म है। *नासतो विद्यते भावो, ना भावो विद्यते सतः।*

गुरु गोरखनाथ कहते हैं कि मनुष्य जीवन की सार्थकता यही है कि उसका सदुपयोग हो। वह व्यर्थ और निष्फल न चला जाय। 'सबदी' का एक पद देखिये–

हसिबा खेलिबा धरिबा ध्यान,

अहनिषि कथिबा ब्रह्म ज्ञान।
हँसै खेलै न करै मन भंग,
ते निहचल सदा नाथ के संग''

हिन्दी भाषा के विकास की दृष्टि से गोरखनाथ ने आधुनिक हिन्दी बोलियों–अवधी और भोजपुरी शब्दों का प्रयोग जैसे हसिबा, खेलिबा, धरिबा, और कहिबा का प्रयोग किया। जबकि संस्कृत के शब्दों को बोली में परिवर्तित कर दिया। जैसे 'अहनिसि' शब्द संस्कृत 'अहर्निश' का देशज रूप है। इसी प्रकार 'निःचल' संस्कृत शब्द 'निश्चल' का देशी प्रयोग है। गोरखनाथ ने अपनी बात कहने के लिए सधुक्कड़ी भाषा के साथ-साथ योग भाषा और बोलियों का भी प्रयोग किया। कुछ विद्वान गोरखनाथ की भाषा को संध्या भाषा भी कहते हैं। हिन्दी के विद्वानों ने गोरखनाथ के साहित्य को उपलब्ध नहीं होने के कारण हिन्दी साहित्य से अलग रखा। यह विवाद का विषय है।

निरंजन की चर्चा करते हुए गोरखनाथ ने कहा,

'उभा मारूं, बैठा मारूं, मारूं जागत सोता।
तीनि लोक भगजाल पसारया, कहां जायबो पूता।

गोरखनाथ जी के अनुसार मृत्यु या काल कहता है कि मैं जीवों को खड़े, बैठे, सोते, जागते कभी भी मार सकता हूँ। काल ने तीनों लोकों में अपना जाल बिछा रखा है। कोई उससे बच नहीं सकता है।

भगजाल का तात्पर्य यहाँ प्रभुत्व का जाल है। भग का अर्थ योनि भी है। जीवों को विभिन्न प्रकार की योनियों से गुजरना पड़ता है, तब मनुष्य योनि मिलती है। गोरख कहते हैं कि इसीलिए मनुष्य जीवन को योग साधना में लगाना चाहिए और अलख निरंजन का अनुभव करना चाहिए। वही जीवन का परम लक्ष्य है। काल की समस्या के समाधान के बारे में गोरखनाथ कहते हैं कि काल आत्मा को नहीं मार सकता है। चूँकि आत्मा अमृत है। गोरखनाथ दावे के साथ कहते हैं कि उन्होंने कुण्डलिनी महाशक्ति को प्रबुद्ध कर षट् चक्रों का भेदन करते हुए परम शिव को प्राप्त कर लिया है। इसलिए उनके शरीर और प्राण दोनों पर काल का वश नहीं चल सकता।

उभा खण्डौ, बैठा खण्डौ, खण्डौ जागत सूता
तिहुलोक ते रहूँ निरंतर तो गोरख अवधूता

गीता में भगवान कृष्ण ने भी कहा कि आत्मा अमर है। मृत्यु आत्मा की सत्ता को समाप्त नहीं कर सकती है।

न जायते, मृयते व कदाचित्। नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतो, अयम् पुराणः। न हन्यते हन्यमाने शरीरे

तथा

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि,
गृहणाति नरोपराणि तथा शरीराणि विहाय

जीर्णानि अन्यानि संजाति नवानि देही।

गोरखनाथ जब कहते हैं कि काल आत्मा को नहीं मार सकता है, तो स्पष्ट लगता है कि गोरख की वाणी और गीता के उपदेश में वास्तव में कोई अन्तर नहीं है। गोरखनाथ निद्रा को अविद्या और माया भी कहते हैं। उन्होंने एक पद में कहा कि अविद्या ने ब्रह्मा, विष्णु और महादेव तक को ठग लिया परन्तु सदा जागते रहने वाले आत्मलीन योगेश्वर गोरखनाथ का कुछ नहीं बिगाड़ सकी क्योंकि गोरख अलख निरंजन के शून्य पद से भी परे कैवल्य पद पर स्थित है।

नीचे के पद में गोरख ने कहा है–

निद्रा कहै मैं अलिया
ब्रह्मा, विष्णु, महादेव छलिया।
निद्रा कहै हूं खरी विगूती
जानै गोरख हूं पहि सूती।

पदम्पुराण की कपिल गीता में निरंजन की कुछ और कहानी बतायी गयी है। सतपुरूष ने सृष्टि के लिए छह पुत्र उत्पन्न किये, 1. सहज, 2. अंकुर, 3.इच्छा, 4.सुहंग (सोहम), 5. अर्चित (अचित्य), 6.अक्षर

सृष्टि के समय सारा जगत जल से भरा हुआ था, जिसमें सतपुरूष ने अपनी सातवीं सन्तान एक अण्डे को छोड़ दिया। यह अण्डा अक्षर पुरुष के पास जो वहाँ उस समय तपोमग्न था, आकर फूटा और उसमें से काल पुरुष निरंजन पैदा हुआ। इसी अण्डे को ऋग्वेद में हिरण्यगर्भ कहा गया है। ऋवेद के दसवें मंडल का 21वां सूक्त हिरण्यगर्भ सूत्र है। इसका पहला मंत्र ही देखें–

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे
भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुमेमां
कस्मै देवाय हविषा विधेम।

अर्थात् परमात्मा का हिरण्यगर्भ स्वरूप सृष्टि की उत्पत्ति से भी पहले उत्पन्न हो गया था। उसके उत्पन्न होते ही वह सभी प्राणियों का स्वामी बन गया। वहीं पृथ्वी और द्यू लोक को धारण किये हुए है।

सत्पुरुष की आज्ञा से इसी निरंजन ने सृष्टि की रचना की। इसके लिए काल पुरुष निरंजन ने आद्या शक्ति या माया को उत्पन्न किया और उसके संयोग से ब्रह्मा, विष्णु और शिव की उत्पत्ति की। इसके बाद निरंजन अन्तर्ध्यान हो गये। कबीरदास ने इस निरंजन की बड़ी फजीहत की है। गोरखनाथ के योग मार्ग में वेदांत, वेद, अद्वैत, निर्गुण ब्रह्म को द्वैताद्वैत-विलक्षण और सगुण, निर्गुण से अतीत परम तत्व की अपेक्षा छोटा समझा गया है। इस प्रकार निरंजन की स्थिति का चित्रण कई प्रकार से किया गया है।

नाथ पंथ में शरीर को ही साधना का महत्वपूर्ण अंग बताया गया है। गोरखनाथ ने कहा

यहु मन सकती, यहु मन सीव।
यहु मन पांच तत्व का जीव।
यहु मन ले जै उनमन रहै।
तो तीन लोक की बाता कहै। (50क)

भावार्थ, योग साधना में मन का महत्वपूर्ण स्थान है। यह मन ही शक्ति है, यही शिव है। यही मन पाँच तत्वों का जीव है। इस मन को योगी उन्मन रखता है। अर्थात् परमात्मा चिन्तन में लगाए रखता है। तभी यह मन तीनों लोकों का रहस्य समझ सकता है।

योगाभ्यास तथा अन्य आध्यात्मिक क्रियाओं में मन की भूमिका प्रमुख है। गीता में कहा गया कि *मन एव मनुष्याणाम् कारणं बन्धमोक्षयोः*। तथा *मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।*

एक अन्य पद में गोरखनाथ कहते हैं-

निरति न सुरति जोगं न भोगं
जुरा मरण नहि तहां नरोगं।
गोरख बोलै एकाकार,
नहि तहां बाचा ओं ओकार (110)

भावार्थ, परम शून्य अलख निरंजन के परम अनुभव में निवृत्ति, निर्विकल्पक समाधि, सुरति, नादानुसंधान और परम शिव का ध्यान आदि कुछ नहीं है। वहाँ न योग है, न भोग है। वहाँ जरा, भरण और रोग का भी प्रभाव नहीं है। वहाँ वाणी की भी पहुँच नहीं है। वहाँ ओंकार की भी पहुँच नहीं है। वह सहज शून्य है। इसी को और अधिक स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा-

गगन मंडल में ऊंधा कुबा (कुंआ)
तहां अमृत का बासा
सगुरा होई सू भरि भरि पीवै
निगुरा जाय पियासा। (23)
गगन न गोपतं तेजे न सोषतम्
पवने न पेलंत बाई
नहीं भारे न मजंत, उदके न डूबन्त
कहो तो को पतियाई।

गोरख के इस कथन और भगवद्गीता में कितना साम्य है देखें–

गीता में एक रूपक है कि परम तत्व ऐसा है, जैसे एक पेड़ उल्टा बना हुआ है अर्थात् उसकी जड़ें ऊपर हों और शाखाएं नीचे हों। इसे ही अव्यय वृक्ष कहते हैं। यही आत्मा का प्रतीक है और आत्मा को न कोई जला सकता है, न काट सकता है, न पानी से गीला कर सकता है और न हवा सुखा सकती है। गोरखनाथ की यह उक्ति गीता से भिन्न नहीं है।

गुरु गोरखनाथ ने अपने समय के योगियों और संन्यासियों की दशा पर चिंता व्यक्त की। उन्होंने कहा–

केता आवै केता जाई,
केता माँगे, केता खाई।
केता रूप, विरख तलि रहे,
गोरख अनुभव का से कहे। (58)

भावार्थ, घर छोड़कर कहीं आना कहीं जाना, भिक्षा माँगकर खाना और वृक्ष के नीचे रहना, केवल इतना करने से कोई योगी नहीं बन जाता है परन्तु अधिकांश योगी ऐसे ही हैं। ऐसी परिस्थिति में गोरखनाथ कहते हैं कि वे अपना 'अनभय' अर्थात् अनुभव किससे कहें? गुरु गोरखनाथ अपने समय के योगियों की स्थिति से खिन्न थे। तुलसीदास ने भी कुछ इसी तरह की बातें कही हैं। उन्होंने कहा–

नारि मुइ गृह सम्पत्ति नासी ।
मूड मुड़ाइ होहि संन्यासी। (**मानस उत्तर दोहा-एक सौ के ऊपर**)

अर्थात् कलियुग में निम्न प्रवृत्ति के लोग जीवन यापन करने के लिए पत्नी के मर जाने के बाद सन्यास ले लेते हैं और योगी बन जाते हैं। इसी प्रकार घर की सम्पत्ति नष्ट होने पर भी सन्यासी हो जाते हैं। यह स्थिति गुरु गोरखनाथ के समय में भी थी। इसीलिए उन्होंने कहा कि ये लोग वास्तविक योगी नहीं हैं। गोरखनाथ ज्ञानमार्ग के योगी थे परन्तु वे योग पर अधिक बल देते हैं। यहाँ तक कि उन्होंने कहा कि जिसके पास ज्ञान नहीं है, वह भी योगाभ्यास से परमात्मा का साक्षात्कार कर लेता है।

अभरा था ते सूभर भरिया
नीझर झरता रहिया।
षांडे थौषुरसाण दुहेला
यू सतगुरि मारग कहिया।

अर्थात् गोरखनाथ कहते हैं कि जो ज्ञानी नहीं है, वह जीवात्मा भी योगाभ्यास से परमात्मा का साक्षात्कार कर लेता है। परन्तु इसके लिए गुरु कृपा आवश्यक है। योग मार्ग तलवार की धार से भी सूक्ष्म तथा अधिक दुःसाध्य है। गोरखनाथ कहते हैं कि परमात्मा वन के जीव-जन्तुओं में भी उसी तरह सहज व्याप्त है, जिस तरह पिण्ड मात्र में उसके विद्यमान होने की आशा की जाती है। जैसे दूध में घी विद्यमान तो है, परन्तु दूध को मथे बिना घी नहीं निकलता है। इसी प्रकार योग साधना से ही परमात्मा का साक्षात्कार किया जा सकता है। वेद में कहा गया- *सर्वखलु इदम् ब्रह्म*। इस संबंध में निम्नलिखित 'सबदी' देखने लायक है।

प्यंडे होई तौ पद की आसा
बनि नियजै चौतारे ।
दूध होई तो धृते की आसा

करणी करतब सारं।

तुलसीदास ने योग मार्ग को कठिन समझ कर ही आम आदमी के लिए इसका निषेध किया। उन्होंने कहा- *'कलियुग केवल हरि गुन गाहा। गावत नर पावहि भवथाहा।*

कलियुग जोग न जग्य न ज्ञान। एक आधार राम गुनि गान।

(मानस उ. दोहा-102 ख)

इसीलिए गोरखनाथ ने योगियों को सलाह दी कि उन्हें अपने पर धैर्य रखना चाहिए और अपनी आपा को नियंत्रित रखना चाहिए।

नाथ कहै तुम आपा राखौ
हठ करि बाद न करणां।
यहु जग है कांटे की बाणी
देखि देखि पग धरणा। (73)

गोरखनाथ कहते हैं कि योगियों को हठ करके वाद-विवाद में नहीं पड़ना चाहिए। यह संसार कांटे की बाणी अर्थात खेती का घेरा है। इसमें देख-देख कर पैर रखना चाहिए। संसार की प्रकृति स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा कि यह संसार द्वंद्वात्मक है। इसमें सुख दुख, दिन-रात, ठंडा-गरम सब चलता रहता है। योगी को इन सब में तटस्थ रहकर केवल द्रष्टा बनकर योग करते रहना चाहिए–

गोरख कहै, सुणह हे अवधू
जग में ऐसे रहणा।
आँखे देखबा, काने सुनिबा
मुख ते कछु न कहना।

गोरखनाथ ने योगियों को यह भी सलाह दी कि उन्हें सुसूपाल अर्थात् मृत्यु से हमेशा डरना चाहिए और सावधान रहना चाहिए। क्योंकि मृत्यु यह नहीं देखती है कि जीवात्मा की आयु में कितने दिन बाकी रह गये हैं। वह कभी भी किसी को अपने चपेट में ले सकती है। इस संबंध में नीचे की 'सबदी' देखने लायक है–

गोरख कहै सुणौ से अवधू
सुसूपाल थै डरिये
लै मुदिगर की सिर में मैले
तो बिनती खूटी मरिये। (74)

योग साधना में प्रत्याहार को स्पष्ट करते हुए गोरखनाथ कहते हैं कि

दृष्टि अग्रे दृष्टि लुकाइबा
सुरति लूकाइबा कानम
नासिका अग्रे पवन लूकाइबा
तब रहि गया पद निरवानं। (75)

इस 'सबदी' में लुकाइबा शब्द का प्रयोग देखने लायक है। यहां लुकाइ इन्द्रिय निग्रह

की प्रक्रिया है। दृष्टि का काम देखना है। योगी को दृष्टि में आस रूपांतरित करके भौतिक समरस नहीं देखना है। इसी प्रकार कान से सुनने की शक्ति को नियंत्रित करके व्यर्थ प्रलाप नहीं सुनना चाहिए। नाक से निकलने वाले श्वांस-प्रवास को प्राणायाम से नियंत्रित करके इसको सबल बनाना चाहिए।

गोरखनाथ ने परम तत्व का साक्षात्कार कर लिया है। यह बात वे डंके की चोट पर कहते हैं। वे सिद्ध हैं। अतः वे जन्म-मृत्यु से परे हैं।

अरध-उरध बिचि घरी उठाई
मधि सुनि मैं बैठा जाई।
मतवाला की संगति आई,
कथंत गोरखनाथ परम गति पाई। (78)

ज्ञान के सम्बन्ध में गोरखनाथ ने एक बार फिर कहा कि केवल पुस्तक पढ़ लेने से ज्ञान नहीं हो जाता है।

विद्या पढ़िर कहावै ज्ञानी
विद्या बिना कहै अज्ञानी।
परम तत्त का होय न मरमी,
गोरख कहै सो महा अधर्मी। (223)

भावार्थ, विद्या पढ़कर आदमी ज्ञानी समझा जाता है, जो विद्या नहीं पढ़ता है, उसे अज्ञानी कहते हैं। परन्तु गोरख कहते हैं कि जो परम तत्व को नहीं जानता है, वह महा अधर्मी अर्थात् अज्ञानी है।

योग साधना का पुस्तकीय ज्ञान से कोई सम्बन्ध नहीं है। कबीरदास ने भी कहा–

पोथी पढ़ि-पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय,
ढाई आखर प्रेम का पढ़ै सो पंडित होय।

यहाँ प्रेम का अर्थ जीवात्मा और परमात्मा का प्रेम है। जब तक योग साधना के माध्यम से जीवात्मा परमात्मा का अनुभव नहीं कर लेता है, उसका सारा पुस्तकीय ज्ञान व्यर्थ है।

गोरखनाथ ने सबदी-222 में इसी को और स्पष्ट किया–

अबूझि बुझिलै हो पंडिता
अकथ करथलै कहांणी।
सीस नवावत सतगुरू मिलीया
जगत रेंण बिहाणी। (222)

तात्पर्य यह है कि अलख निरंजन परब्रह्म परमात्मा ज्ञान-विज्ञान से परे है। वह अज्ञेय है, उसके स्वरूप का साक्षात्कार अंतर्दृष्टि से होता है, वह शब्द से परे है, वह मन-वाणी से अगम और अगोचर है, जो उसे प्राप्त कर लेता है, वहीं उसे जान सकता है। परमात्मा को वहीं समझ सकता है, जिसने उसका साक्षात्कार कर लिया है। फिर परम तत्व से साक्षात्कार के बाद साधक स्वयं परम तत्व हो जाता है।

तुलसीदास जी ने कहा– *तुमरे जान तुमहि होई जाई।*

तुम्हें जानने के बाद भक्त स्वयं भगवान में समाहित हो जाता है। कहते हैं कि पिंड में ही समस्त ब्रह्मांड स्थित है। शरीर से ही परमात्मा का अनुभव किया जा सकता है।

पंथ चले चलि पवना तूटै,
तन छीजै तत जाई।
काया ते कछू अगम बतावै,
ताकि मुंडू भाई। (224)

अर्थात् गोरख कहते हैं कि अगर कोई सिद्ध कर दे कि परम तत्व काया से अलग है, तो मैं उसका शिष्य बन सकता हूँ।

कबीरदास ने भी यही बात कही–

साधू सहजै काया साधौ
जैसे बटका बीज ताहि में पत्र फूल फल छाया।
काया मद्धे बीज विराजे, बीजा मद्धे काया।
अग्नि-पवन-पानी-पिरथी-नभता बिन मिले नाये।

गोरखनाथ शरीर की संरचना को स्पष्ट करते हुए कहते हैं–

अवधू यो मन जात है,
याही ते सब जांणि।
मन मकड़ी का ताजज्यूं,
उलट अपूठौं आणि। (234)

भावार्थ, गोरख कहते हैं कि हे अवधूत, यह मन बड़ा चंचल है। गीता में कहा गया 'चंचलम् हि मनः कृष्ण।' इसको नियंत्रित करना आवश्यक है क्योंकि इसी मन से समस्त सृष्टि है। साधना में मन को अपूठौ अर्थात् पीठ की ओर पीछे ले जाना चाहिए। जिस प्रकार मकड़ी अपने धागे को मुँह से निकाल कर फिर निगल जाती है। इसी प्रकार मन से उत्पन्न सारी सृष्टि को प्रयास करके उल्टा निगलना चाहिए।

जीवात्मा के मन की दो वृत्तियाँ हैं– आशा और संशय। गोरखनाथ कहते हैं कि ये दोनों ही रोग हैं। इन दोनों के कारण जीवात्मा अपने सच्चे स्वरूप में स्थिर नहीं हो पाता है। संसार की क्षणभंगुर वस्तुओं को सच मानना विपत्ति का कारण है। इसे ही आशा कहते हैं। इसी प्रकार संसार के असत्य रूप को सत्य मानना ही शोक का कारण है। इससे साधक के मन में शोक उत्पन्न होता है। यह सिद्धान्त वाक्य है कि आशा परमम् दुःखं नैराश्यं परम सुखम्। अगर हम किसी चीज़ की आशा करते हैं, जब वह पूरी नहीं होती है, तो दुःख होता है। इसी प्रकार संशय के बारे में भी कहा गया है। गीता में भगवान कृष्ण ने कहा, संशयात्मा विनश्यति। अर्थात् संशय में जीने वाला व्यक्ति नष्ट हो जाता है।

हठ योग में जीवों के प्रति दया भाव और उनसे प्रेम करना आवश्यक बताया गया है।

जल मीन सदा रहे जल में

सूकर सदा मलीना।
आत्मज्ञान दया विणि कुछ नहीं,
कहा भयो तन खीणा। (240)

भावार्थ, जल में मछली सदा स्वच्छ रहती है और सूअर हमेशा गन्दा रहता है। आत्म ज्ञान के बिना सब व्यर्थ है। भले ही तपस्या से शरीर को क्षीण बना लिया हो। गोरखनाथ कहते हैं कि जीवात्मा के प्रति साधक के मन में आत्मभाव होना चाहिए। गोरखनाथ ने इस सबदी के माध्यम से कहा है कि जीवात्मा का स्वभाव भी बड़ा विचित्र है। किसी का स्वभाव बदलना आसान नहीं है। गीता में भी भगवान ने कहा- स्वभावो हि दुरतिक्रमः।

एक लोक कहावत है–

जाकर जौन स्वभाव जाय न हि जीसे।
नीम न मीठी होय तलो गुड़ घीसे।

अर्थात्, जीवात्मा का स्वभाव बदलना आसान नहीं है। गोरख कहते हैं कि केवल काय संधान, कुण्डलिनी जागरण करते हुए षटचक्र भेदन, प्राणायाम, आसान, मुद्रावंध से शरीर को शोधित कर लेने से योग में सिद्धि नहीं प्राप्त हो सकती है।

हमारी चितवृत्ति में दूसरों के प्रति दया रहनी चाहिए। सच्चा योग सिद्ध वही है, जिसके हृदय में दया और करुणा है। हठयोग केवल अपनी उन्नति की यात्रा नहीं है। गोरखनाथ कहते हैं कि आत्मा की उन्नति के साथ-साथ समाज की भी उन्नति के बारे में सोचना चाहिए। इस पर गोरखनाथ विशेष बल देते हैं। इसी गुण के कारण वे अन्य नाथ और सिद्ध संतों से अलग हैं। उन्होंने हठ योग को सामाजिक क्रांति का माध्यम बनाया।

गुरु गोरखनाथ ने योगियों को हिंसा नहीं करने की सलाह दी।

जीव सीव संगे बासा,
बधि न खाइबा रूध्र मासा।
हंस घात न करिबा गोतं,
कथंत गोरख निहारिपोंतं। (226)

भावार्थ, जीव अर्थात् जीवात्मा और सीव अर्थात शिव या परमात्मा एकसाथ रहते हैं। दोनों में कोई भेद नहीं है। इसलिए किसी भी जीव का वध करके उसका रूध्र अर्थात् रुधिर और मांस नहीं खाना चाहिए। अपने गोत्र परिवार आदि की हत्या नहीं करनी चाहिए। सभी जीव एक परिवार के हैं। गोरखनाथ कहते हैं कि सभी जीवों को अपने पोंत अर्थात् पुत्र की तरह समझना चाहिए।

इसी तरह के विचार मोहम्मद साहब ने कुरान शरीफ सूरह 5 आयात 3 में कही है। कुरान शरीफ में कहा गया है कि मुर्दा जानवर, खून और सूअर का मांस खाना वर्जित है।

गोरखनाथ ने कहा कि मानव जीवन का उद्देश्य परब्रह्म का अनुभव है। यह केवल शास्त्रों के पढ़ने और अध्यात्म चिंतन से जीवन की सार्थकता नहीं है।

पढ़ि पढ़ि पढ़ि केता मुवा,
कथि कथि कथि कहा कीन्ह।
बढ़ि बढ़ि बढ़ि बहु घट गया,
पार ब्रह्म नहीं चीन्ह। (248)

गोरखनाथ के समय में नाथ परम्परा के अन्तर्गत योगियों के कई समुदाय थे। एक ही पंथ के अनुयायी होने के बावजूद उनमें कुछ विभिन्नता भी थी। उन्होंने इसे देखते हुए योगियों की परम्पराओं को स्पष्ट किया। उन्होंने कहा–

गिरही होय करि कथै ज्ञान,
अमली होय करि धरै ध्यान।
वैरागी होय करै आसा,
नाथ कहे तीन्यों खासा पासा। (246)

भावार्थ, तात्पर्य यह है कि गृहस्थ जीवन में साधना करना कठिन है। किसी प्रकार अमली होकर भी ध्यान नहीं लगाया जा सकता। वैरागी होने के बाद अगर जीवात्मा आशा के चक्कर में पड़ा रहता है तो वह भी सच्चा योगी नहीं कहा जा सकता। इसी बात को उन्होंने एक और सबदी में स्पष्ट किया है–

कथणी कथै सो सिख बोलिये,
बेद पढ़ै सो नाती।
रहणी रहै सो गुरु हमारा,
हम रहता का साथी। (270)

भावार्थ, कथणी अर्थात् गुरु का कथन मानने वाला ही शिष्य होता है। जो केवल वेद पढ़कर संतुष्ट हो जाता है, वह शिष्य से नीचे तीसरी श्रेणी में अर्थात् नाती की अवस्था में है। जो महायोग से परमात्मा का साक्षात्कार करता है, उसकी रहनी अर्थात् जीना ही सार्थक है। गोरखनाथ कहते हैं कि हम ऐसे योगी के साथ हैं। अगली सबदी में उन्होंने और स्पष्ट किया–

रहता हमारे गुरु बोलिये,
हम रहता का चेला।
मन मानै तो संग फिरै,
नहितर फिरै अकेला। (271)

भावार्थ, जो गुरु के उपदेश पर चलता है, उसे गुरु के समान मानना चाहिए। उसी के अनुसार आचरण करना चाहिए। अगर मन करे, तो ऐसे प्राणी के साथ रहे या अकेला भ्रमण करना ही ठीक है।

दारसण भाइग् दासण बाप,
दरसण माही आवै आप।
या दरसण का कोई जाणै भेव

सो आपै करता आपै देवे। (272)

भावार्थ, नाथ योग की भाषा में दरसण का मतलब ब्रह्मानुभूति या स्वरूप बोध है। यही साधना का मूल है और यही साधना का पर्यवसान है। इसे जानने वाला साक्षात् परमेश्वर हो जाता है। तुलसीदास ने भी कहा, तुम्हरे जान तुमहि हो जाई।

गोरखनाथ ने योगियों को कलियुग की बुराइयों से सावधान रहने को कहा-

हिरदा का भाव हाथ में जाणियें,
यहु कलि आई खोटी।
वदंत गोरख सुणो रे अवधू,
करवै होई सुनिकसे टोटी।

भावार्थ, गोरखनाथ कहते हैं कि यह घोर कलियुग है, जिसके हृदय में जो भाव है, वह उसके हाथ या कर्म से पता लग जाता है। जल पात्र में जैसा द्रव रहेगा, वही बाहर टोटी से निकलता है।

कबीरदास ने भी योगियों को वाणी पर नियंत्रण रखने की सलाह दी। उन्होंने कहा–

अति का भला न बोलना,
अति की भलि न चूप
अति का भला न बरसना,
अति की भली न धूप।

रामचरित मानस में भी मनुष्य जीवन को सबसे उत्तम बताया गया है। तुलसीदास ने कहा –

नर सम नहि कवनिउ देही
जीव चराचर जाचत तेही

उन्होंने आगे कहा–

परम धर्म श्रुति विदित अहिंसा,
परनिंदा सम अघ न गिरिसा,
मोह सकल व्याधिन कर मूला
तिनते पुनि उपजहि बहु सूला।
सदगुरू वैद बचन विश्वासा।

तुलसीदास की इस धारणा पर गोरखनाथ का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है।

गोरखनाथ कहते हैं कि कुण्डलिनी जागरण करते हुए षट्चक्र भेदन, प्राणायाम, आसन, मुद्रावंध से शरीर को शोधित कर लेने से योग में सिद्धि नहीं प्राप्त हो सकती है। सिद्धि प्राप्त करने के लिए हमारी चित्तवृत्ति में दूसरों के प्रति दया रहनी चाहिए। सच्चा योग सिद्ध वही है, जिसके हृदय में दया और करूणा है। हठयोग केवल अपनी उन्नति की यात्रा नहीं है। गोरखनाथ कहते हैं कि आत्मा की उन्नति के साथ-साथ समाज की भी उन्नति के बारे में सोचना चाहिए। इस पर गोरखनाथ विशेष बल देते हैं। इसी गुण के

कारण वे अन्य नाथ और सिद्ध संतों से अलग हैं। उन्होंने योग को सामाजिक क्रांति का माध्यम बनाया।

गोरखपुर के गोरखनाथ मंदिर के पीठाधीश ब्रह्मलीन महन्त अवैद्यनाथ ने रामलाल श्रीवास्तव की पुस्तक 'गोरखवाणी' में अलख-निरंजन की व्याख्या करते हुए कहा है कि– 'योगेश्वर गोरखनाथ जी के योगज्ञान का चरम प्रतिवाद्य साक्षात् अलख-निरंजन है। उन्होंने निश्चित मत अभिव्यक्त किया कि निरंजन का ध्यान ही सर्वोपरि है। 'सिष्टपुराण' में उनका कथन है– निरंजन उपरांति ध्यान नहीं। अपनी प्रसिद्ध रचना 'ज्ञान तिलक' में गोरखनाथ ने निरंजन के साक्षात्कार पर प्रकाश डाला है–

अंजन माहि निरंजन भेट्या,
तिलमुख भेट्या तेलं।
मूरति माहिं अमूरति परसया,
भरा निरेतरि खेलं।

(**ज्ञान तिलक -41**)

गोरखनाथ कहते हैं कि अलख निरंजन योग मार्ग के ज्ञान की अवहेलना नहीं करनी चाहिए। क्योंकि मनुष्य जन्म बार-बार नहीं मिलता है।

आपा भांजिवा सतसगुरू खेजिबा,
जोग पंथ न करिबा हेला।
फिर फिर मनिरवा जनम न पायबा,
करिले सिधुरसि सूं मेला। (**सबदी-203**)

गोरखनाथ की उलटबांसियाँ

उल्टी बात कहने के बारे में कबीरदास मशहूर हैं। कबीर की उलटबांसियाँ इतनी लोकप्रिय हैं कि ग्रामीण क्षेत्र का आदमी भी कबीर का नाम लेते ही कहता है कि–*कबीरदास की उल्टी बानी। बरसै कंबल भीजै पानी।* परन्तु कबीर को उलटबांसी मे अपनी बात कहने की प्रेरणा वास्तव में गुरु गोरखनाथ से मिली। नाथ और सिद्ध सम्प्रदाय के साधकों ने अपनी अधिकांश गूढ़ बातें उलटबांसियों के माध्यम से कही। प्रश्न यह उठता है कि गोरखनाथ को उलटबांसी के माध्यम से बात कहने की प्रेरणा कहाँ से मिली? किसी ने नाथपंथी योगी से पूछा कि वे अपनी बात सीधे ढंग से क्यों नहीं कहते हैं, तो योगी ने कहा कि यह संसार ही उल्टे ढंग से सोचता है।

'गोरख सिद्धान्त संग्रह' में कहा गया है कि ''एक योग सम्प्रदाय के सिवा अन्य सभी मतों की बात उल्टी है। नाथ का अंश नाद है, नाद का अंश प्राण और शक्ति का अंश बिन्दु है, बिन्दु का अंश शरीर। इससे स्पष्ट है कि नाद और प्राण बिन्दु शरीर से भी अधिक महत्वपूर्ण है अर्थात् पुत्र-क्रम की अपेक्षा शिष्य-क्रम अधिक माना है। दुनिया के लोग ठीक इसके उल्टे चाल चलते हैं। उनकी दृष्टि में पुत्र-क्रम ही अधिक है और शिष्य-क्रम अल्प है परन्तु नाथपंथी लोग शिष्य-क्रम को प्रधान मानते हैं और यही ठीक भी है। दुनिया का क्रम है धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष-ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वान-प्रस्थ और सन्यास। शृंगार, हर्ष, करूण और रौद्र-विभत्स, भयानक-अद्‌भुत, शान्त। पृथ्वी, जल, तेज, वायु-आकाश। ब्रह्मा विष्णु, शिव इत्यादि अर्थात् सब उल्टा। क्योंकि जो श्रेष्ठ है, उसको पहले स्थान देना चाहिए। अपेक्षाकृत कम श्रेष्ठ को बाद में। इस प्रकार वास्तविकता में बिल्कुल उल्टा होगा। यथा, मोक्ष-धर्म, अर्थ-काम, सन्यास-वानप्रस्थ और गार्हस्थ-ब्रह्मचर्य। शान्त, करूण अद्‌भुत, वीर, रौद्र, हास्य, भयानक, वीभत्स, शृंगार आदि। यही योग सम्प्रदाय की रीति है। यही तंत्र सम्प्रदाय की भी''। (पृ.-98, 59) इस सिद्धान्त का यह परिणाम हुआ कि योगी और तांत्रिक दुनिया से उल्टी बात कहने के आदी हो गये। मज़ेदार

बात यह है कि ऐसा कहने से उनकी प्रतिष्ठा बढ़ती गयी और यह लोग डंके की चोट पर और अधिक उत्साह से सीधी बात को भी उल्टी करके, कठिन करके, धक्कामार बनाकर कहते गये। तुम कहते हो सूर्य प्रकाश और जीवन देता है, बिल्कुल गलत है। यही तो मृत्यु का कारण है। चन्द्रमा से जो कुछ अमृत झरा करता है, वह सूर्य ही चट कर जाता है। उसका मुँह बन्द कर देना, योगी का परम कर्तव्य है। क्योंकि जो आकाश में तप रहा है, वह वास्तव में सूर्य नहीं है। असल में सूर्य नाभि के ऊपर रहता है और चन्द्रमा तालु के नीचे। (**हठ योग-3-78**) तुम कहते हो, गोमांस महापाप है, वारूणी पीना निषिद्ध है। भोले हो तुम। यही तो कुलीन का लक्षण है क्योंकि गो है जीभ का नाम और उसे तालु में उलटकर ब्रह्मरंध्र की ओर ले जाना ही गोमांस भक्षण है। तालु के नीचे जो चन्द्र है, उससे जो सोमरस नामक अमृत झरा करता है, वही अमर वारूणी है, इसका पाना तो बड़े पुण्य का फल है। (**हठ योग 3-46, 48**) तुम कहते हो बाल विधवा सम्मान और पूजा की वस्तु है। सारे समाज को उसके सम्मान और रक्षा की ज़िम्मेदारी लेनी चाहिए। एकदम उल्टी बात है क्योंकि गंगा और जमुना की मध्यवर्ती पवित्र भूमि में वास करने वाली एक तपस्विनी बाल विधवा है। उसको बलपूर्वक ग्रहण करना ही तो विष्णु के परम पद को प्राप्त करने का सही रास्ता है। कारण स्पष्ट है। गंगा इड़ा है और जमुना पिंगल। इन दोनों की मध्यवर्तिनी नाड़ी सुषुम्ना में कुण्डलिनी नामक बाल रण्डा को ज़बरदस्ती ऊपर उठा ले जाना ही तो मनुष्य का परम लक्ष्य है (**हठ योग 3-4**) तुम कहते हो कि पंचमवर्णी अवधूत बनकर मंत्र-तंत्र करने से सिद्धि मिलेगी, यह बेतुकी बात है। अपनी घरनी को लेकर जब तक केलि नहीं करते, बोधि प्राप्ति की आशा बेकार है। क्योंकि तरूणी घरनी के बिना जप, होम, सब व्यर्थ है क्योंकि घरनी तो असल में महामुद्रा है। उसके बिना निर्वाण पद कैसे मिल सकता है। योगियों सहजयानियों और तांत्रिकों के ग्रन्थों में ऐसी उलटबांसियाँ भरी पड़ी हैं। योगियों के पारिभाषिक शब्दों में उल्टी बानी को प्रभावशाली बनाने की अद्‌भुत क्षमता है।

भारतीय साहित्य में वेद सबसे पुराने हैं। वेदों में बहुत से ऐसे मंत्र हैं, जो उलटबांसी की तरह लगते हैं। वेदों के बाद महाभारत और उसके अंश गीता में भी कई बातें इस ढंग से कही गयी हैं कि वे उलटबांसियाँ लगती हैं। इस सम्बन्ध में एक कथा है, जिसे सब लोग जानते हैं। भगवान वेदव्यास ने महाभारत की रचना जब प्रारम्भ की, तो उन्हें एक योग्य लेखक की आवश्यकता पड़ी। उन्होंने इसके लिए देवताओं से अनुरोध किया। देवताओं ने सर्वसम्मति से यह निर्णय लिया कि गणेश जी ऐसे देवता हैं, जो यह कार्य कुशलता से सम्पादित कर सकते हैं क्योंकि वे विद्या और बुद्धि के धनी हैं। देवताओं के निर्णय को टाला नहीं जा सकता था। परन्तु गणेश जी ने वेद व्यास का लेखक बनना अपना अपमान जानकर उनके सामने एक शर्त रख दी और उन्हें टालना चाहा। शर्त ऐसी जो पूरी न हो सके। गणेश जी ने वेद व्यास से कहा कि ठीक है, मैं आपका लेखक बनने को तैयार हूँ परन्तु मेरी भी एक शर्त है। वेद व्यास ने कहा कि वह शर्त क्या है? गणेश

जी ने कहा कि मैं एक बार जब लिखना प्रारम्भ कर दूँगा, तो बीच में कहीं विराम नहीं करूँगा और अगर आपने मुझे लिखने के लिए सामग्री नहीं दी, तो मैं आपका काम छोड़ दूँगा। व्यास जी ने कहा कि ठीक है, मेरी भी एक शर्त है। गणेश जी ने पूछा, क्या? व्यास जी ने कहा कि मेरी शर्त यह है कि आप कोई भी पद्य तब तक नहीं लिखेंगे, जब तक उसका अर्थ आप स्वयं नहीं समझ लेंगे। गणेश जी ने यह शर्त मान ली। उन्होंने यह समझा कि वेद-व्यास ऐसी कौन-सी बात कहेंगे, जिसे मैं नही समझ सकूँगा। उसके बाद महाभारत की रचना शुरू हुई। व्यास जी लगातार बोलते रहते थे, जब उन्हें लगा कि उन्हें विराम लेना चाहिए तो वे एक 'कूट श्लोक' बोल देते थे। कूट श्लोक एक तरह से उलटबांसी होते थे। उनका अर्थ समझना आसान नहीं था। ये कूट श्लोक आज भी उपलब्ध हैं। मेरी समझ से साहित्य में उलटबांसी लिखने की परम्परा भगवान वेद व्यास ने ही प्रारम्भ की थी। इसी से प्रेरणा लेकर गुरु गोरखनाथ और बाद में कबीर दास और अन्य लोगों ने उलटबांसियों की रचना की।

नाथ परम्परा की उलटबांसियाँ भी काफी मशहूर हैं। एक उदाहरण -

गगन मंडल में ऊंधा कुबा (कुआं)
तहां अमृत का बासा
समुरा होई सु भरि भरि पीबै। निगुरा जाइ पियासा (23)
गगन न गोपतं तेजे न सोर्षतं
पवने न पेलंत बाई।
मही भारे न भाजंत
उदके न डूबंत कहो तो को पतियाई

पहले पद्य का अर्थ यह है कि आकाश में उल्टा कुआँ है, वहाँ अमृत की वर्षा हो रही है। जिसने गुरु की शरण ली है, वह छककर अमृत पान करता है। जिस पर गुरु की कृपा नहीं है, वह प्यासा ही रह जाता है। यहाँ गगन मण्डल का तात्पर्य सहस्रार अथवा ब्रह्मरंध्र है। सद्गुरु साधक की शक्ति को बढ़ाते हुए मूलाधार चक्र में सोई कुण्डलिनी को जागृत करके सुषुम्ना नाड़ी के माध्यम से शून्य पद में परम शिव से साक्षात्कार कराकर अमृत पान कराते हैं। गीता में भी कई श्लोक उलटबांसियों की तरह हैं, जैसे निम्नलिखित उदाहरण–

उर्ध्वमूलम् अधः शाखम् अश्वत्थम् प्राहुः अव्ययम्।

वह अश्वत्थम् या पीपल का वृक्ष, जो अव्यय है, उसकी जड़ें ऊपर हैं और डालियाँ नीचे हैं। मेरी समझ में गोरखनाथ और कबीरदास तथा अन्य सिद्धों और नाथों ने जो उलटबांसियों का प्रयोग किया, उन्होंने गीता के इसी श्लोक से प्रेरणा ली होगी। *गगन न गो पतं तेजे न खोषतं*–गोरखनाथ की यह सबदी हुबहू गीता के श्लोक का अनुवाद लगती है। गीता में कहा गया है–

नैनं छिंदंति शस्त्राणि, नैनं दहति पावकः

न चैनं क्लैदयन्ति आपः न शोषयति मारूतः।

गोरखनाथ की इस सबदी और गीता के श्लोक में कितनी समानता है...। इससे स्पष्ट होता है कि गोरखनाथ ने गीता से प्रेरणा ली होगी।

यहु मन सकती यहु मन सीव,
यहु मन पाँच तत्व का जीव।
यहु मन ले जै उनमन रहै,
तौ तीन लोक की बातां कहै

भावार्थ, योग साधना में मन का महत्वपूर्ण स्थान है। यह मन ही शक्ति है, यही शिव है। यही मन पाँच तत्वों का जीव है। इसी मन को योगी उन्मन रखता है अर्थात् परमात्मा चिन्तन में लगाये रखता है, तभी यह मन तीनों लोकों का रहस्य समझ सकता है।

सच बात तो यह है कि उलटबांसी का प्रयोग सबसे पहले गोरखनाथ ने किया। डॉ. अनुज प्रताप सिंह ने अपनी पुस्तक 'गोरखनाथ और नाथसिद्ध' में पृष्ठ 466 पर लिखा है– 'उलटबांसियाँ गोरखबानी में खूब है। यही स्वस्थ परम्परा कबीर आदि संतों तक बढ़ी है, बल्कि आज भी खजड़िया, ढफली बजा-बजा कर भीख माँगने वाले फकीरों में भी पायी जाती है। उदाहरण के लिए कुछ उलटबासियाँ प्रस्तुत हैं–

नाथ बोले अमृत वाणी,
वरिषैगी कंवली भीजेगा पाणी।
गाड़ि पडरवा बांधि तौ खूंटा,
चलै दमांमा वाजिल ऊटा।
कडवा की डाली पीपल वासै,
भूसा के सबद विलइया नासै।
चले बतावा थाकी बाट,
सोय डुकरिया ठौरे खाय।
ढुकिले कुकुर भूकिलै चोर,
काढै धणी पुकारे।
चीट्या पर्वत ढोल्या रे अवधू,
गायां बांध बिडरायागी।
ससुसलै समदा लहरि मनाई,
मृधा चीता मारया जी।
गिगन मंडल में गाया बियाई,
कागद दही जमाया।
छाणि छाणि पंडिता पीवी,
सिधा माखण खाया।

गोरखनाथ ने 102 सबदी में 'बिलाइत' शब्द का प्रयोग किया है–

जोगी सो जे मन जोगावे,
बिन बिलाइत राग भोगावै।
कनक कामिनी त्यागे दोई,
सो जोगेस्वर निर्भय होई। (102)

यहाँ बिलाइत शब्द का अर्थ अगर विलायत-अंग्रेज से है, तो प्रश्न यह उठता है कि गोरखनाथ के समय तक तो अंग्रेजों से भारत का सम्पर्क नहीं हो पाया था। यह शब्द कहाँ से आया?

उलटबांसी का एक और उदाहरण–

'ज्ञान तिलक' पद-16 और 17 में देखिये–

हाली भीतर खेत निदांणै,
बगु में ताल समाई।
बरखै मोर कुहूके सावण,
नदी अपूठी आई। (16)
मऊ पद माही महौकर फदकै,
दादर भर्थ झिलारे।
चात्रिग मै चौमासी बोले,
ऐसा समा हमारै।

हाली अर्थात् किसान सभी जीवात्मा शरीर रूपी खेत से खर-पतवार निकालता रहता है। बगुला अर्थात् मन तालाब में बैठा रहता है। मोर बरसता है और सावन कुहुकता है। गोपद में पुष्कर समा जाता है। दादुर अर्थात् मेढक आनन्दमग्न हो उठता है। चौमासे में चातक साक्षात शिव को प्राप्त कर लेता है।

योगाभ्यास तथा अन्य आध्यात्मिक क्रियाओं में मन की भूमिका प्रमुख है। गीता में यह भी कहा गया– 'मन एव मनुष्याणाम् कारणं बन्धमोक्षयोः' तथा मन के हारे हार है, मन के जीते जीत' इस सबदी में मन का स्वरूप स्पष्ट किया गया है। गोरखनाथ कहते हैं कि मन ही शिव है, मन ही शक्ति है। यही मन जाग्रत कुण्डलिनी है, यही मन परम् शिव का रूप है। अन्त में उन्होंने स्पष्ट कर दिया कि यही जीव आत्मा है। इसी को 'उन्मन' रखना है। जीव आत्मा-परमात्मा चिंतन में लगा रहता है। तभी वह तीनों लोकों का रहस्य समझ पाता है। मन को नियंत्रण में रखना चाहिए। ऐसा सुनते ही अर्जुन ने कृष्ण से कहा कि हे माधव, मन तो बड़ा चंचल है। मन को बस में रखना वैसे ही है जैसे वायु को मुट्ठी में बन्द करना। श्रीकृष्ण ने इसका समाधान बताया कि मन को अभ्यास और वैराग्य से नियंत्रित किया जा सकता है- *अभ्यासन तु कौन्तेय वैराग्वेण च गृहते*। गुरु गोरखनाथ ने भी इसी प्रकार का सुझाव अपने साधकों को दिया।

एक अन्य उदाहरण–

निरति न सुरति जोगं न भोगं

जुरा मरण नहि तहां नरोगं।
गोरख बोलै एकंकार,
नहि तहां बाचा ओं ओंकार (110)

परम शून्य अलख निरंजन के परम अनुभव में निवृत्ति, निर्विकल्पक समाधि, सुरति-नादानुसंधान और परम शिव का ध्यान आदि कुछ नहीं है। न योग है, न भोग है। वहाँ जरा, मरण और रोग का भी प्रभाव नहीं है। वहाँ वाणी की भी पहुँच नहीं है। वहाँ ओंकार की भी गति नहीं है। वह सहज शून्य है।

इस पद में निर्विकल्पक समाधि के बाद परमानुभव पद की व्याख्या की गयी है। उस अवस्था में योग, भोग, समाधि नादानुसंधान परम शिव का ध्यान आदि कुछ भी नहीं है। ध्यान तो हठ योग की प्रथम अवस्था में है, जब जीव कुण्डलिनी को जाग्रत करके समाधि, योग, नादानुसंधान करने का प्रयास करता है। परन्तु एक बार परमानुभव पद पर पहुँच जाने के बाद ये सब बातें व्यर्थ हो जाती हैं। साधक जरा, मृत्यु और रोग के भय से भी मुक्त हो जाता है। माया ने सृष्टि रचना में निरंजन से त्रिदेवों को पैदा किया और उनको भी छल दिया परन्तु माया गुरु गोरखनाथ का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकी। गुरु गोरखनाथ एक तरह से ज्ञान मार्ग के साधक हैं। तुलसी दास ने इसे बहुत अच्छी तरह समझाया। उन्होंने कहा कि *भगतिहि ज्ञानहि, नहि कुछ मेरा, उभय, हरहुं भव संभव खेदा।* परन्तु माया भक्ति मार्ग पर चलने वाले का कुछ बिगाड़ नहीं सकती क्योंकि माया भी स्त्री है और भक्ति भी स्त्री है, इसलिए तुलसीदास ने कहा, *मोह न नारि नरि के रूपा। पन्नगारि यह रीति अनूपा।*

यह गुरु गोरखनाथ के व्यक्तित्व का प्रभाव है कि ज्ञान मार्ग पर चलने वाले गुरु गोरख को भी माया अपने फंदे में नहीं ले सकती, जबकि ज्ञान पथ पर चलने वाले साधक माया के जाल में फँस जाते हैं।

हठ योग में शरीर शुद्धि पर बहुत बल दिया गया है। हालांकि गोरखनाथ के पहले हठ योग के साधक सात्विक नहीं थे। वे मांस, मदिरा इत्यादि का खुलकर प्रयोग करते थे। गोरखनाथ ने इस परम्परा को मोड़ दिया, उन्होंने साधकों से कहा–

धोतरा न पीवों रे अवधू
भांगि न खाओ रे भाई।
गोरख कहै सुनौ रे अवधू। या काया होइगी पराई। (241)

भावार्थ, गुरु गोरखनाथ ने साधकों को सलाह दी और कहा, हे अवधूत धतूरा मत पीओ, भांग मत खाओ। गोरख कहते हैं, मादक पदार्थों के सेवन से स्नायु तंत्र निर्बल हो जाता है। मन चंचल हो जाता है और बुद्धि क्षीण हो जाती है।

गोरखनाथ को यह प्रेरणा निश्चित रूप से गीता से मिली होगी क्योंकि गीता में भी साधकों के लिए सात्विक भोजन करने की सलाह दी गयी है। गीता में बहुत विस्तार से बताया गया है कि कौन-सा पदार्थ सात्विक है और कौन नहीं है।

इतना ही नहीं, कबीरदास ने भी यही सलाह दी–

अति का भला न बोलना अति की भली न चूक
अति का भला न बरसना अतिकी भली न झूठ

रामचरित मानस में भी इसी तरह की बात कही गयी-

नर सम नहि कवनिऊ देही
जीव चराचर जांचत तोही।

अर्थात् मनुष्य का शरीर दुर्लभ है। यह योग करने के लिए तथा भक्ति करने के लिए है। इसको व्यर्थ बर्बाद नहीं करना चाहिए।

योग मार्ग में अहिंसा को भी काफी महत्व दिया गया है। तुलसीदास ने कहा,

परम् धर्म श्रुति विदित अहिंसा,
परनिंदा सम अघ न गिरीसा।
मोह सकल व्याधिन कर मूला,
तिनते पुनि उपजहि बहुसूला।

हठयोग में साधकों को हिंसा से भी दूर रहने की सलाह दी गयी है। उदाहरण–

जीव सीव संगे बासा,
बधि न खाइव रूध्रमासा।
हंस घात न करिबा गोतं
कथंत गोरख निहारिपोतं। (226)

भावार्थ, जीव अर्थात् जीव आत्मा और सीव अर्थात् शिव या परमात्मा एक साथ रहते हैं। दोनों में कोई भेद नहीं है। इसलिए किसी जीव का वध करके उसका रूधिर और मांस नहीं खाना चाहिए। गोरखनाथ कहते हैं कि सभी जीव एक ही गोत्र के हैं, अतः हम सब एक परिवार के हैं। इसलिए अपने परिवार के किसी सदस्य की हत्या नहीं करनी चाहिए। उन्होंने कहा कि जीवों को अपने पुत्र के समान समझना चाहिए।

नाथपंथी योगियों की रहस्यवादी रचनाएं जनता में भी बड़ी लोकप्रिय थीं। उनमें दिये हुए संकेतों की व्याख्या में लोग आनन्द लेते थे। बिहार न्यायिक सेवा के एक अधिकारी त्रिलोकीनाथ तिवारी ने चर्चा के दौरान बताया कि बचपन में उनके गाँव में एक योगी आते थे और सारंगी पर जो कविता सुनाते थे, वह बड़ा रोचक है। उन्होंने याद करते हुए कहा कि उनके गाँव में एक योगी सारंगी पर कविता कह रहा है- योगी को गांजा पीने की इच्छा थी, परंतु वह यह बात सीधे न कह कर रहस्यात्मक भाषा में कहता था। उसने जो कविता सुनाई, उसका भाव यह है कि एक योगी गाँव में देखता है कि कुँए पर चार महिलाएं पानी भर रही हैं। योगी ने उनसे कहा- 'गहागड्ड, गहागड्ड कहीं खोज गहागड्ड और पिला दो गहागड्ड'। यह सुनकर उनमें से एक युवती ने समझा कि योगी पानी पीना चाहता है, तो युवती ने जवाब दिया-'लाल कलश की लाल है टोटी औ कलश का खड्ड। हम भरे तू पीयो हकीरा तब मचे गह गड्ड।' योगी ने कहा, 'ए तो न गह गड्ड बालिके, ए तो न गह गड्ड बालिके।' दूसरी युवती ने सोचा कि योगी भूखा

है, खाना खाना चाहता है। उसने कहा, 'लाल गेहूँ की लाल चपाती। ओ मुर्गे की ठड्ड। हम बेली तू खाउ फकीरा, तब मचे गहागड्ड-गहागड्ड।' योगी ने इनकार करते हुए कहा, 'यह तो न गहागड्ड-गहागड्ड, कहीं खोज गहागड्ड। ले आओ गहागड्ड, पिला दो गहागड्ड।' इसके बाद तीसरी युवती ने समझा कि योगी इश्क़मिज़ाज है। तीसरी युवती ने कहा, लाल पलंग पर लाल बिछौना, ओ तकिये का खड्ड। हम तू जो सोओ फकीरा, तब मचै गहागड्ड-गहागड्ड। योगी ने इनकार करते हुए कहा,'यह तो न गहागड्ड-गहागड्ड, कहीं खोज गहागड्ड। ले आओ गहागड्ड, पिला दो गहागड्ड।' चौथी युवती ने कहा, हरे पत्ते की हरी है डंडी, वो चिलनी की ठड्ड। हम भरे तू पीयो फकीरा, तब मचे गहागड्ड-गहागड्ड। योगी ने खुश होकर कहा, यही तो है गहागड्ड बालिकै। इस प्रकार नाथपंथी योगी लोगों के बीच संकेत और रहस्यमयी बातें करके उन्हें अपना संदेश देते थे। इस प्रकार सांकेतिक शैली नाथपंथी साहित्य में प्रचुर मात्रा में मिलती है।

गोरख-धन्धा

गोरख-धन्धा शब्द आमतौर पर व्यंग्य के अर्थ में लिया जाता है। यह शब्द ऐसे कार्यों के लिए प्रयुक्त किया जाता है, जिसमें जादूगरी का चमत्कार दिखाई देता है। ऐसे कार्यों को लोग गम्भीरता से नहीं लेते हैं। गोरखनाथ एक महान आध्यात्मिक व्यक्ति और समाज सुधारक थे। उन्होंने जीवन भर सामाजिक बुराइयों और धार्मिक आडम्बरों का विरोध किया। यहाँ तक कि उन्होंने अपने ही गुरु मछेन्दर नाथ के सिद्धान्तों और मार्ग को बदल कर नाथ पन्थ को सात्विक रास्ते पर बढ़ाया। आश्चर्य होता है कि इसके बावजूद उनके कार्यों की अहमियत को कम करने के लिए गोरखधन्धा शब्द का आविष्कार करके गुरु गोरखनाथ के योगदान को कम करने की कोशिश की गयी। इसका कारण नाथ पन्थ की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने जायसी ग्रन्थावली पृ.-36 पर लिखा कि 'नाथ पंथ की परम्परा वास्तव में महायान शाखा के योगमार्गी बौद्धों की थी, जिसे गोरखनाथ ने शैव रूप दिया'। गोरखनाथ के समय में बौद्ध धर्म भारत में अपने पतन की पराकाष्ठा पर था। बौद्ध धर्म में तंत्र साधना कौलाचार और वामाचार की प्रधानता हो गयी। यहाँ तक कि बौद्ध तांत्रिकों में मांस, मदिरा, मीन, मैथुन आदि मकारों की सहायता सिद्धि प्राप्त के लिए आवश्यक बन गयी। उस समय तक भारत में आम लोगों मे बौद्ध धर्म की लोकप्रियता उसके प्रति घृणा में बदल गयी थी। नाथ पन्थ के मूल में चूँकि महायान शाखा की बज्रयान परम्परा का बौद्ध दर्शन था, अतः स्वाभाविक रूप से लोग नाथ पन्थ से दूर होते गये। गोरखनाथ ने अपने पन्थ को बौद्ध दर्शन के सिद्धान्तों से हटाकर सात्विक मार्ग पर प्रतिष्ठापित किया और नाथ पंथ को सनातन धर्म का अंग बना दिया। परन्तु आम जनता को उन पर पूरा विश्वास नहीं हुआ और लोगों ने उनके प्रयास का नामकरण गोरखधन्धा कर दिया। परन्तु गुरु गोरखनाथ इससे विचलित नहीं हुए और आध्यात्मिक सुधार का अपना कार्य करते रहे।

गोरखधन्धा शब्द को अविश्वसनीय कार्यों का प्रतीक बनाने में सगुण समुदाय के विद्वानों और सन्तों का भी हाथ था। गोरखनाथ ने गोरखपंथ को सनातन धर्म के रूप में परिवर्तित तो कर दिया, परन्तु मूलतः उनका दर्शन निर्गुणवादी ही रहा। अतः सगुणवादी

सन्त-महात्मा उनका विरोध करते रहे और उनकी खिल्ली उड़ाना जारी रखा। सगुण मतावलम्बी संतों की संख्या अधिक होने के कारण वे गोरखपन्थियों पर हावी हो गये। कालान्तर में लोक जीवन में भी नाथपंथी योगियों का मजाक उड़ाया जाने लगा। जोगीरा और कबीरा गीतों की पैरोडी यहीं से शुरू हुई। जोगीरा लोकगीतों मे योगियों का मजाक उड़ाया जाता है। लगता है, उस समय की राजनीतिक और सामाजिक परिस्थिति में निर्गुण योगियों की नहीं, अपितु सगुणोपासक योद्धाओं की आवश्यकता थी, जो विदेशी आक्रांताओं से लोहा ले सकें। गुरु गोरखनाथ की तरह निर्गुण पन्थ मानने वाले कबीरदास का भी सगुणोपासक लोगों ने मज़ाक उड़ाया। लोक जीवन में योगियों का मज़ाक उड़ाने के लिए जिस प्रकार जोगीरा गीत बनाये गये, वैसे ही कबीर दास को नीचा दिखाने के लिए कबीरा लोकगीतों की रचना की गयी, जिनमें कबीरदास तक का खुलकर मज़ाक उड़ाया जाता है। गुरु गोरखनाथ से लेकर कबीरदास तक का समय सामाजिक उथल-पुथल का समय था। उस समय सम्भवतः निर्गुण सिद्धान्त लोक-लुभावन नहीं रह गया था। यह वह समय था, जब खजुराहों के मन्दिरों का निर्माण कराया जा रहा था। इनका उद्देश्य जीवन में केवल योगी बनकर अलख निरंजन का साक्षात्कार करना नहीं, बल्कि धर्म-अर्थ-काम और मोक्ष जैसे पुरुषार्थों को जीवन-यापन के लिए श्रेयस्कर माना गया। सगुणोपासना में मोक्ष प्राप्ति के लिए प्रौढ़ावस्था के बाद तपस्या करने का प्रावधान है, उसके पहले जीवन के अन्य सभी सुखों को भोगना ही उचित बताया गया। गोरखपन्थियों और कबीरपन्थियों से मतभेद होने के कारण सगुणोपासकों ने उनको नीचा दिखाने के लिए उन्हें बदनाम करने की पूरी कोशिश की, जिसमें वे सफल भी हो गये। गोरखपंथ को बदनाम करने में मुसलमानों और अन्य मतावलम्बियों ने भी प्रभावशाली भूमिका निभाई। वे गोरखपन्थियों को कनफटा योगी कहकर उन्हें नीचा दिखाते थे। इन्होंने गुरु गोरखनाथ को कभी गम्भीरता से नहीं लिया।

विरोधी विचारधारा के लोगों को पराजित करने के लिए उसे बदनाम करने की परम्परा हमारे देश में बहुत प्राचीन है। ऋग्वेद के पुराने मंत्रो में असुर शब्द का अर्थ देवता है। 'असवः प्राणाः' जिनके पास प्राण वायु अधिक हो, जो अधिक बलशाली हो, उन्हें असुर कहा जाता था। परन्तु कालान्तर में असुरों अर्थात् देवताओं में एक अलग गुट बन जाने के कारण सुर शब्द का आविष्कार हुआ। सुर अर्थात् जो असुर नहीं है। देवता सुर और विरोधी गुट दानव असुर हो गये।

सम्राट अशोक की पदवी 'देवानां प्रिय' शब्द का अर्थ अशोक को नीचा दिखाने के लिए 'मूर्ख' कर दिया गया। संस्कृत में 'देवानाम् प्रियः' शब्द का यही अर्थ आज भी है। यह एक कहावत है, वैसे ही जैसे 'गोरखधन्धा' है। इतना ही नहीं, बौद्ध धर्म के कई आध्यात्मिक शब्दों का देशज रूप आज भी उसका प्रतीक है। बौद्ध शब्दावली में पुंगल का अर्थ ज्ञानी पुरुष होता है, किन्तु लोक भाषा में पुंगल से बना पोंगा शब्द 'मूर्ख' का पर्यायवाची है। वर्तमान समय में भी विभिन्न विचारधाराओं के लोग विरोधी विचारों के

शब्दों का मज़ाक उड़ाते हैं। उदाहरण के तौर पर वामपंथी, दक्षिणपंथी, धर्मनिरपेक्ष आदि शब्दों का प्रयोग एक दूसरे को नीचा दिखाने के लिए होने लगा है। एक कहावत है, बद अच्छा बदनाम बुरा। हालांकि बद को भी अच्छा नहीं कहा जाना चाहिए लेकिन बदनाम होना तो कत्तई अच्छा नहीं है। एक बार बदनाम हो जाने पर बड़ी मुश्किल से छवि में सुधार होता है, इसका सबसे बड़ा उदाहरण गोरखधन्धा शब्द है। गुरु गोरखनाथ किसी भी हालत में कबीरदास, तुसलसीदास, शंकराचार्य और रामानन्द जैसे महात्माओं से कम नहीं थे, किन्तु निर्गुण ब्रह्म की उपासना करने के कारण सगुणोपासकों ने उनके काम का उपहास करना शुरू कर दिया और 'गोरखधन्धा' शब्द चल पड़ा, परन्तु गोरखनाथ इससे विचलित नहीं हुए।

गोरखनाथ ने भी किसी को नहीं बख्शा। एक सबदी में उन्होंने कहा-

काजी मुला कुराण लगाया, ब्रह्म लगाया बेदम्।
कापड़ी सन्मासी तीरथ भ्रमाया, न पाया निर्वाण पद का भेदम।

अर्थात् काजी और मुल्ला कुरान की रट लगाए रहते हैं। तथाकथित ब्रह्मज्ञानी वेद की ऋचाओं का पाठ करते हैं। कापड़ी अर्थात् गंगोत्री से गंगा जल लेकर चलने वाले तीर्थ यात्री कांबड़ी लोग यात्रा को महत्व देते हैं। गोरख कहते हैं कि परमात्मा केवल कुरान और वेद के ज्ञान या यात्रा से नहीं प्राप्त होता है, उसके लिए योग, साधना अनिवार्य है।

गोरखनाथ ने एक अन्य 'सबदी' के माध्यम से देश भर के साधकों की दशा का वर्णन किया–

दक्षिण जोगी रंगा चंगा,
पूरबी जोगी वादी,
पश्चिमी जोगी बाला भोगा,
सिद्ध जोगी उतराधी। इसके साथ ही–
अवधू पूरब दिसि व्याधि का रोग।
पश्चिम दिशि मृत्यु का सोग,
दक्षिण दिशि माया का योग,
उत्तर दिशि सिद्धि का योग।

गुरु गोरखनाथ अपने विरोधियों को अच्छी तरह समझते थे। इसके लिए उन्होंने अवधूत योगियों को सलाह दी कि वे किसी के साथ वाद-विवाद में न उलझें और साधना करते रहें। गोरखनाथ कहते हैं कि–

तुम आपा राखों हठकरि बाद न करना।
यह जग टांके की बाणी
देख-रेख पग धरना।

गोरखनाथ ने कहा कि योगियों को किसी के साथ हठ करके विवाद नहीं करना चाहिए। क्योंकि यह संसार कांटों का जाल है। इसमें पड़कर जोगी उलझ जाएगा।

उन्होंने कहा कि योगियों को किसी के साथ हठ कर विवाद नहीं करना चाहिए–

गोरख कहे सूणो रे अवधू,
जग में ऐसे रहणा।
आखें देखिबा काने सुणिया,
मुखते कछू न कहणा। इतना ही नहीं उन्होंने योगियों को सलाह दी–
मनमें रहिणा भेद न कहिणा बोलिबा अमृत वाणी।
अगिला, अगली होइबा अवधू के आपण होइबा पाणिं।

योगियों को सबसे मधुर वचन बोलना चाहिए। अगर योगी पर कोई दुर्भावनावश क्रोध भी करे, तब भी योगी को शान्त रहना चाहिए। उसके विरोधी स्वयं शान्त हो जाएंगे।

क्या विडम्बना है कि निर्गुणपंथी कबीरदास ने भी गुरु गोरखनाथ की साधना पद्धति का मज़ाक उड़ाया। गुरु गोरखनाथ ने कहा कि उन्हें आलोचकों की परवाह नहीं, क्योंकि वे जानते हैं कि उनका योग मार्ग ही सही है। इतना ही नही इसी मार्ग पर चलकर उन्होंने अलख निरंजन से साक्षात्कार भी कर लिया है।

पाया लो भल पाया लो
सबद थांन सहेती थीति।
रूप सहे दीसण लाया।
तब सर्व भई परतीत।

वह कहते हैं कि उन्होंने नाद-अनुसंधान से ब्रह्म पद में प्रवेश कर शिवैक्य की स्थिति प्राप्त कर ली है, चाहे कोई माने या न माने।

इस प्रकार उन्होंने किसी की परवाह न करके प्राचीन भारतीय योग परम्परा को फिर से प्रतिष्ठित किया। अब समय आ गया है, जब हमें गुरु गोरखनाथ के कार्यों का पुनर्मूल्यांकन करना चाहिए और 'गोरखधंधा' शब्द को गौरवशाली अर्थ में लिया जाना चाहिए या इसे भूला देना चाहिए। 'गोरखधंधा' शब्द को वास्तविक अर्थ देकर ही हम भारत का सांस्कृतिक और आध्यात्मिक उत्थान कर सकते हैं। वर्तमान में भी धर्म की आड़ में कतिपय साधु-संत समाज का अहित कर रहे हैं। गोरखनाथ ने ऐसे ही तत्वों का जमकर विरोध किया था और सनातन धर्म को फिर से प्रतिष्ठापित किया था। गोरखनाथ की एक सब्दी देखिये–

कोई न्यंदै कोई व्यंदै,
कोई करै हमारी आसा।
गोरख कहै सुणों रे अवधू,
यह पथ खरा उदासा।

तात्पर्य यह है कि कोई हमारी निन्दा करता है, कोई प्रशंसा करता है, कोई हमसे वरदान माँगता है, किन्तु हमारा मार्ग तटस्थता और वैराग्य का मार्ग है। इतनी खरी बात कहने के कारण ही गोरखनाथ के प्रयासों को महत्व नहीं दिया गया।

गोरख वचनावली

गोरखनाथ की सबदी और अन्य रचनाओं से चुने हुए पद

(1)

महंमद महंमद न करि काजी
महंमद का विषम विचारं।
महुमद हाथि करद जे होती
लोहै घड़ी न सारं।।

शब्दार्थ : करद- हथियार, विषम- गंभीर

(2)

सबदै मारी सबद जिलाई
ऐसा महमंद पीरं।
ताकै भरम न भूलो काजी
सो बल न ही सरीरं।।

शब्दार्थ : सबद- शिक्षा, पीरं- ज्ञान।

(3)

नाथ कहतां सब जग नाथ्या
गोरख कहंता गोई।।
कलमा का गुरु महंमद होता
पहले हुआ सोई।।

शब्दार्थ : नाथ- गोरखनाथ, नाथ्या- मनुष्यों को जोड़ना

(4)

उत्पति हिन्दू जरणा जोगी।
अकलि पीर मुसलमानी।
ते राह चीन्हो हो काजी
मुला ब्रह्मा विष्णु महादेव मानी

शब्दार्थ : उत्पति-जन्म, जरणा-जीवन।

(5)

महमंद महमंद न करि काजी,
महमंद का बौहोत विचारम्
महमंद साथि पैकंबर सीधा
एक लाख अस्सी हजारम्।

शब्दार्थ : बौहोत-महत्वपूर्ण, पैकंबर- पैगम्बर।

(6)

हिन्दू ध्यावै देहुरा मुसलमान मसीत।
योगी ध्यावै परमपद जहां देहुरा न मसीत।

शब्दार्थ : देहुरा-मंदिर, मसीत-मस्जिद।

(7)

हिन्दू आषै राम कौं मुसलमान खुदाई
जोगी आषैं अलख हो
तहां राम अछैय न खुदाई।

शब्दार्थ : आशै- देखना, अछैय- है

(8)

दूधाधारी पर घरिचित
नागा लकड़ी चाहे नित।।
मौनी करै म्यंत्र की आस
विनु गुर गुदड़ी नहीं बेसास।।

शब्दार्थ– म्यंत्र- सहाय, बेसास- विश्वास

(9)

बैठा बारै चल अठारै
सूतां तूरै तीस।
कई थन अरंता चौसटि टूटे
क्यों भजिबो जगदीस।

शब्दार्थ : अठारे- अट्ठारह, सूतां- सोते समय,
कई थन अरंता- चलते समय

(10)

नासिका अग्रे भूमंडले
अहनिस राहिबा थीरम
माता गरभि जनम न आयवा
बहुरि न पियबा खीरम्

शब्दार्थ : थीरम-स्थिर, खीरम-दूध

(11)

ऐसा जाप जयपौ मन लाई
सोहं सोहं अजपा गाई
आसण दिढ़ करि धरौ धियान
अहनिस सुमिरौ बृहम गियानं।

शब्दार्थ : आसण-आसन, धियान-ध्यान, गियानं- ज्ञान

(12)

जाग्रत न्यंद्रा सुलप अहारं
काम क्रो अहंकार निवारं।
नासा अग्र नियुज्यौ बाई
इड़ा प्युगला मधि समाई
छ सै सहंस इकीसो जाप (21600)
अनहद उपजै आप ही आप।

शब्दार्थ : न्यंद्रा- नींद, सुलप-थोड़ा, बाई-सांस, मधि-बीज

(13)

बंक नालि मैं ऊगै सूर
रोम-रोम धुनि बाजे जूर
उलटै कंबल सहंसदल वास
भ्रमर गुफा महि जयोति प्रकाश
मछिन्द्र प्रताप जती गोरख कहै
परम तत कोई विरला लहै

शब्दार्थ : सूर-सूर्य, जयोति-ज्योति

(14)

बसती न सुन्यं, सुन्यं न बसती अगम अगोचर ऐसा।
गगन शिखर महिं बालक बोले नाँव दरहुगे कैसा।।

शब्दार्थ : सुन्यं- शून्य, नाँव- नाम

(15)

हसिबा खेलिबा धरिबा ध्यान,
अहनिषि कथिबा ब्रह्म ज्ञान।
हसैय खेलै न करै मन भंग,
ते निहचल सदा नाथ के संग

शब्दार्थ : निहचल-निश्चल

(16)

उभा खण्डौ, बैठा खण्डौ, खण्डौ जागत सूता
तिहुलोक ते रहूँ निरंतर तो गोरख अवधूता

शब्दार्थ : तिहुलोक- तीनों लोक, उभा- चलते समय

(17)

निद्रा कहै मैं आलिया
ब्रह्मा, विष्णु, महादेव छलिया।
निद्रा कहै हूं खरी विगूती

जानै गोरख हूं पहि सूती।
शब्दार्थ : निद्रा- माया, विगूती- बांझ
(18)
निरति न सुरति जोगं न भोगं
जुरा मरण नहि तहां न रोगं।
गोरख बोलै एकाकार,
नहि तहां बाचा ओं ओकार (110)
शब्दार्थ : वाचा-वाणी
(19)
गंगन मंडल में ऊंधा कूबा
तहां अमृत का बासा
सगुरा होई सू भरि भरि पीवै
निगुरा जाय पियासा। (23)
शब्दार्थ- ऊंधा-उलटा, कूबा-कुआँ, निगुरा-जिसका गुरु न हो
(20)
गगन न गोपतं तेजे न सोषतम्
पवने न पेलंत बाई
नही भारे न मजंत उदके न डूबन्त
कहो तो को पतियाई।
(21)
केता आवै केता जाई,
केता माँगे, केता खाई।
केता रूप, विरख तलि रहे,
गोरख अनुभव का से के।
(22)
अभरा था ते सूभर भरिया
नीझर झरता रहिया।
षांडे थौषुरसाण दुहेला
यू सतगुरि मारग कहिया।
(23)
प्यंडे होई तौ पद की आसा
बनि नियजै चौतारे ।
दूध होई तो धृते की आसा
करणी करतब सारं।

(24)
नाथ कहै तुम आपा राखौ
हठ करि बाद न करणां।
यहु जग है कांटे की बाणी
देखि देखि पग धरणा। (73)
(25)
गोरख कहै, सुणह हे अवधू
जग में ऐसे रहणा।
आँखें देखबा, काने सुनिबा
मुख ते कछु न कहना।
गोरख कहै सुणौ से अवधू
सुसूपाल थै डरिये
लै मुदिगर की सिर में मैले
तो बिनती खूटी मरिये। (74)
(26)
दृष्टि अग्रे दृष्टि लुकाइबा
सुरति लू काइका कानम
नासिका अग्रे पवन लूकाइबा
तब रहि गया पद निरवानं। (75)
(27)
अरध-उरध बिचि घरी उठाई
मधि सुनि मैं बैठा जाई।
मतवाला की संगति आई,
कथंत गोरखनाथ परम गति पाई। (78)
(28)
विद्या पढ़ि र कहावै ज्ञानी
विद्या बिना कहै अज्ञानी।
परम तत्त का होय न मरमी,
गोरख कहै सो महा अधर्मी। (223)
(29)
अबूझि बुझिलै हो पंडिता
अकथ करथलै कहांणी।
सीस नवावत सतगुरू मिलीया
जगत रैंण बिहाणी। (222)

(30)
पंथ चले चलि पवना तूटै,
तन छीजै तत जाई।
काया ते कछू अगम बतावै,
ताकि मुंडू भाई। (224)

(31)
साधू सहजै काया साधौ
अवधू यो मन जात है,
याही ते सब जांणि।
मन मकड़ी का ताजज्यूं,
उलट अपूठौं आणि। (234)
(32)
जल मीन सदा रहे जल में
सूकर सदा मलीना।
आत्मज्ञान दया विणि कुछ नहीं,
कहा भयो तन खीणा। (240)
(33)
गगन मंडल में ऊंधा कुबा (कुआं)
तहां अमृत का बासा,
समुरा होई सु भरि भरि पीबै।
निगुरा जाइ पियासा
(34)
गगन न गोपतं तेजे न सोर्षतं
पवने न पेलंत बाई।
मही भारे न भाजंत
उदके न डूबंत कहो तो को पतियाई
(35)
यह मन सकती यहु मन सीव,
यहु मन पांच तत्व का जीव।
यह मन ले जै उनमन रहै,
तौ तीन लोक की बातां कहै

(36)
निरति न सुरति जोगं न भोगं
जुरा मरण नहि तहां नरोगं।
गोरख बोलै एकंकार,
नहि तहां बाचा ओं ओंकार (110)
(37)
धोतरा न पीवों रे अवधू
भांगि न खाओ रे भाई।
गोरख कहै सुनौ रे अवधू।
या काया होइगी पराई। (241)
(38)
जीव सीव संगे बासा,
बधि न खाइव रूध्रमासा।
हंस घात न करिबा गोतं
कथंत गोरख निहारिपोतं। (226)
(39)
काजी मुला कुराण लगाया, ब्रह्म लगाया बेदम।
कापड़ी सन्मासी तीरथ भ्रमाया, न पाया निर्वाण पद का भेदम।
(40)
पाया लो भल पाया लो
सबद थांन सहेती थीति।
रूप सहे दीसण लाया।
तब सर्व भई परतीत।
(41)
जीव सीव संगे बासा,
बधि न खाइबा रूध्र मासा।
हंस घात न करिबा गोतं
कथंत गोरख निहारिपोतं। (226)
(42)
पढ़ि पढ़ि पढ़ि केता मुवा,
कथि कथि कथि कहा कीन्ह।
बढ़ि बढ़ि बढ़ि बहु घट गया
पार ब्रह्म नहीं चीन्ह। (248)

(43)

गिरही होय करि कथै ज्ञान,
अमली होय करि धरै ध्यान।
वैरागी होय करै आसा,
नाथ कहे तीन्यों शासा पासा। (246)

(44)

कथणी कथै सो सिख बोलिये
बेद पढ़ै सो नाती।
रहणी रहै सो गुरु हमारा,
हम रहता का साथी। (270)

(45)

रहता हमारे गुरु बोलिये
हम रहता का चेला।
मन मानै तो संग फिरै,
नहितर फिरै अकेला। (271)

(46)

दरसण भाइग् दरसण बाप
दरसण माही आवै आप।
या दरसण का कोई जाणै भेव
सो आपै करता आपै देवे। (272)

(47)

हिरदा का भाव हाथ में जाणियें
यहु कलि आई खोटी।
वदंत गोरख सुणो रे अवधू,
करवै होई सुनिकसे टोटी।

(48)

अवधू काया हमारी नालि बोलिए दारू बोलिए पवनं।
अगनि पलीता अहद गरजै व्यंद गोला उड़ि गगनं।

(49)

अंजन माहि निरंजन भेट्या तिलमुख भेटया तेलं।
मूरति माहं अमूरति परस्या, भरा निरंतरि पेलं।।

(ग्यांनतिलक-41)

(50)

आपा भंजिबा सतगुर शोजिबा जोग पंथ न करिबा हेला।
फिर-फिरि मनिशा जनम न पायबा करिलै सिध पुरसि सूं मेला।।

(गोरखबानी- सबदी-203)

(51)

गुरदेव स्वंभ देव सरीर भीतरिये।
आत्मा उत्तिम देव ताही को न जाणै सेव।
आंन देव पूजि-पूजि इमही मरियै।

(52)

जोगारंभ की याही वांणी।
सब घट नाथ एकै करि जाँणी। (दयाबोध-1)

(53)

पाप पुंन करम का बासां। मोश मुक्ति चेतहु हरि पासा।।
जोगजुक्त जब पाओ म्यांन। काया शोजो पद नृबांन।।

(प्राणसंकली-2)

(54)

अदेशि देशि विचारिबा। अदिसिट राशिवा चीया।
पाताल की गंगा ब्रह्मंड चढ़ाइबा। तहाँ विमल बिमल जल पीया।

(गोरखबानी सबदी- 2)

(55)

यहु मन सकती यहु मन सीब। यहु मन पांच तत्व का जीव।
यहु मन ले जै उनमन रहै। तौ तीनि लोक की बातां कहैं।

(गोरखबानी सबदी- 50)

(56)

मरौ वे जोगी मरौ, मरण है मीठा।
तिस मरणी मरौ, जिस मरणी गोरश मरि दीठा।

(गोरखबानी सबदी- 26)

(57)

मान्यां सबद चुकाया दंद।
निहचै राजा भरथरी परचै गोपीचंद।

(गोरखबानी सबदी-15)

(58)

गुरु कीजै गहिला निगुरा न रहिला।
गुरु बिन ग्यांन न पायला रे भाईला।। (गोरखबानी पद-34)

(59)
इहां ही आछे इहां ही आलोप। इहां ही रचिलै तीनि त्रिकोक।
आछै संगै रहै जू धा। ता कारणि अनंत सिधा जोगेस्वर हूवा। (3)
(60)
अवधू ईस्वर हमारे चेला भणिजै,
मछिन्दर बोलिये नाती।
निगुरी पिरथी परलै जाति,
ताते हम उलटी थापना थापी। (144)
(61)
यंन्द्री का लड़बड़ा जिभ्या का फूहड़ा।
गोरख कहे ते पतंति चूहड़ा।
काछ का जति, मुख का सति।
सो सत पुरुष उत्तमे कथी। (152)
(62)
आसण दिढ़ आहार दिढत्र
जे न्यंन्दा दिढत्र होई।
गोरख कहै सूणौ रे पूता,
मरे न बूढ़ा होय। (125)
(63)
अवधू खारै खीरें खाटै झरै, मीठै, उपजै रोग।
गोरख कहै सुणौ से अवधू अनै पांणी जोग। (140)
(64)
जिभ्या, संवाद तत तन खोजै,
हेला करै गुरु वाया।
अगनि बिहूंणा बंध न लागै,
ढलक जाई रस काचा। (143)
(65)
अवधू ईस्वर हमारे चेला भणिजै,
मछिन्द्र बोलिये नाती।
निगुरी पिरथी परलै जाती,
ताथै हम उलटी थापना थोपी। (141)

(66)
भरि भरि खाइ ढरिढरि जाई,
जोग नहि पूता बड़ी बलाइ।
संजण होई बाइसंग्रहौ,
इस विधि अकल पुरिस को गहौ। (145)
(67)
खाये भी मरिये, अणखाये भी मरिये,
गोरख कहै पूता संजम ही तरिये।
मधि निरंतर कीजै बास,
निश्चल मनुआ थिर होई सांस। (140)
(68)
व्यंद (वीर्य) ही जोग
व्यंद ही भोग।
व्यंद ही हरै, चौसठि रोग
या विंद का कोई जाणै भेव
सो आप करता आपै देव। (148)
(69)
जोगी होय पर निंदा झरवैं,
मद मांस अरू भांगि भखै।
इकोतरसै पुरिखा नरकहि जाई,
सति सति भाखत श्रीगोरखराई। (164)
(70)
निरति न सुरति जोंग न भोगं,
जरा मरण नहीं तहां रोंग।
गोरख बोले एकांर,
नहि तहं वाचा ओ अकार। (110)
(71)
उदय न अस्त राति न दिन,
सखे सचराचर भव न भिन्न।
सोई निरंजन डान न मूल,
सब कायिक सुक्षमन न अस्थूल। (111)

(72)

सन्यासी सोई करै सर्वनास,
गंगन मंडल महि मांडे आस।
अनहद सू मन उनमन रहे,
सो सन्यासी अगम की कहै। (103)

(73)

उनमन जोगी दसवै द्वार। नाद व्यंद ले धूं धूंकार।
दसवे द्वारे देइ कपाट। गोरखखोजी औरे बाट। (135)

(74)

जोगी होई पर निंदा झषै।
मद मास अरू भांगी जो भषै।
इको तरसे पुरिखा नरकही जाई।
सति सति भाखंड श्री गोरखनाथ। (164)

(75)

अवधू मांस भषंत दया का नास,
मद पीवत तहाँ प्राण निरास।
भांगि भषंत ज्ञांन, ध्यानं, सोखन्त।
जम दरबारी ते प्राणी सोवंत।

(76)

मेरा गुरु तीनि छंद गावै।
ना जांणौ गुर कहां गैला, मुझ नींदड़ी न आवै।
कुम्हरा के घरि हांडी आछै, अहीरा कै घर सांडी।
बभना कै धरि रांडी आछै, रांडी सांडी हांडी।।
राजा कै घरि सेल आछै, जंगल मधे बेल।
तेली के घरि तेल आछै, तेल बेल सेल।।
अहीर कै घरि महकी आछैं, देवल मधें ल्यंग।
हाटी मधे हींग आछैं ल्यंग स्यंग।।
एकै सुत्रैं नाना बणियां बहुँ भांति दिखलावै।
भणंत गोरशि त्रिगुणी माया, सतगुरु होई लशावै। (पद-42)

उपरोक्त पद गोरखनाथ की रचना पद से लिया गया है। इसमें गुरु की महिमा बताई गयी है। इसके साथ ही माया की व्यापकता को दर्शाया गया है।

भोगिया ससूते अजहूँ न जागे। भोग नहीं रे रोग अभागे।
भोगिया कहैं भल भोग हमारा। मनसइ नारि किया तन छारा।।
एक बूँद नर नारी रीधा। ताही मैं सिध साधिक सीधा।

भोगिया सोइ जो भगथैं न्यारा। राजस-तामस झरै न पार।
भणंत गोरषनाथ सुणो नर लोई। कथणीं बदणीं जोग न होई।।

(पद-44)

इस पद में गोरखनाथ लोगों से आग्रह करते हैं कि वे संसार की मोह-माया से ठोकरें खाकर भी कोई शिक्षा नहीं लेते हैं। गोरख कहते हैं कि क्षणभंगुर सुख को वास्तविक सुख समझने वाले भूल करते हैं। उन्हें परमात्मा में ध्यान लगाकर योग मार्ग पर चलना चाहिए।

नाथ बोलै अमृत बांणी, बरिशैगी कंबली भीजैगा पांणी।
गाड़ि पडरबा बांधिलै शूंटा, चल दमांमा बाजिले ऊँटा।।
कउवा की डाली पीपल बासै, मूसा के सबद बिलइया नासै।
चले बटावा थाकी बाट, सोवै डुकरिया ठौरै शाट।।
ढूकिले कूकर भूकिले चोर, काढै धणी पुकारै ढोर।।
मगरी परि चूल्हा घूंधाइ, पीवणहारा कौं रोटी खाइ।।
कामिनी जलै अंगीठी तापैं, बिचि बैसंदर थरथर कांपै।।
एक जु रढिया रढ़ती आई, बहू बियाई सासू जाई।।
नगरी कौं पांणी कूंई आवै, उलटी चरचा गोरष गावै। (पद-47)

उपरोक्त पद गोरखनाथ की उलटबांसी है। इसी तरह की उलटबांसी कबीरदास के नाम से प्रसिद्ध है–

कबीरदास की उलटी बानी। बरसै कम्बल भीगे पानी।

बहुत कम लोगों को मालूम है कि कबीरदास की इस कविता पर गोरखनाथ का प्रभाव है।

बांधौ बांधौ बछरा पीओ शीर।
कलि अजराव होय सरीर।।
आकास की धेन बछा जाया। ता धेन कै पूछ न पाया।
बारह बछा सोलह गाई। धेनु दुहावत रैनि बिहाई।।
अचरा न चरै धन कचरा न शाई।
पंच ग्वालियां कौ मारण धाई।।
याही धेनका दूध जु मींठा। पीवै गोरषनाथ गगन बईठा। (पद-51)

उपरोक्त पद भी गोरखनाथ की रहस्यवादी रचना है। इसमें प्रतीकों के माध्यम से योग का रहस्य समझाया गया है।

आवै संगै जाइ अकेला। ताथै गोरष राम रमेला।
काया हंस संगि ह्वै आवा। जाता जोगी किनहुँ न पावा।
जीवत जग मैं मूवां मसांणं। प्राण पुरिस कत कीया पयांण।
जांमण मरणां बहुरि बिओगी। ताथै गोरष भैला जोगी।। (पद-52)

सांभलि राजा बोल्या रे अवधू। सुणौ अनापम बांणी जी।
निरगुण नारी सूं नेह करतां। झबकै रैणि बिहांणी जी।
डाल न मूल पत्र नहिं छाया। बण जल पिंगुला सीचै जी।
बिण ही मढ़ीया मंदला बाजै। यण बिध लोका रीझै जी।
चींट्या परबत ढोल्यारे अवधू। गायां बाघ विडार्या जी।
सुसलै समदां लहरि मनाई। मृघां चीता मार्या जी।
ऊझड़ मारगि जाता रे अवधू। गुर बिण नहीं प्रकासा जी
जीत्या गोरष अब नहीं हारै। ससमझि रराले पासा जी। (पद-57)

यह पद भी गोरखनाथ की एक रहस्यवादी रचना है, जिसमें योग की महिमा बताई गयी है।

मन रे राजा राम होइलै नृदंद, मूलै कमलै साजिलै रविचंद।
अनहद भौरो भवैं तृबेणीं कै घाट
पीयलै महारस फाटिलै कपाट।
चंदा करिले शूटा, सूरजि करि लै पाट।
नित उठि धोबी धोवे तृबेणीं के घाट।।
भरिलै नाड़ी शोड़ी पुरिलै बंक नालि,
बदंत गोरषनाथ अवधू, इस उतरिबौ पार। (पद-59)

इस पद में गोरखनाथ ने कबीर की तरह राम शब्द का प्रयोग किया है। गोरखनाथ निरगुण सम्प्रदाय के हैं। इसके बावजूद उन्होंने अपनी रचना में राम शब्द शामिल किया है, परन्तु उसका अर्थ अयोध्या के राम से नहीं है।

नाथ निरंजन आरती साजै। गुर के सबदूं झालरि बाजै।
अनहद नाद गगन में गाजै। परम जोति तहाँ आप बराजै।।
दीपक जोति अषंडत बाती। परम जोति जगै दिन-राती।।
सकल भवन उजियारा होई। देव निरंजन और न कोई।।
अनत कला जाकै पार न पावै। संष मृदंग धुनि बेनि बजावे।।
स्वाति बूंद लै कलस बंदाऊँ। निरति सुरति ले पहुप चढ़ाऊँ।।
निज तत नांव अमूरति मूरति। सब देवां सिरि उदबुदि सूरति।।
आदिनाथ नाती मछेन्द्रनाथ पूता। आरती करै गोरष औधूता।।

(पद-62)

आत्मबोध-1

ऊँ आसण करि पदम आसण बंधि। पिछलै आसण पवनां संधि।
मन मुछावै लावै ताली। गगन सिषर मैं होइ उजाली।।
प्रथम बैसि बाई दर बंधि। पवनां शैलै चौसठ संधि।।

नव दरवाज़ा देवै ताली। दसवां मधें होई उजाली।।
ऐसा भुवंगम जोगी करै। धरती सोषै अंबर भरे।।
गगने सुर पवने सुरतांणि। धरनी की पांणी अंबरि आंणि।।
ता जोगी की जुगति पिंछाणि। मन पवन ले उनमनि आंणि।।
मन पवन ले उनमनि रहै। तौ काया गजै गोरष कहे।।
चढ़े महारस अमरा भरै। ऐसा आरम्भ जोगी करै।
उलटी सक्ति चढ़ै ब्रह्मण्ड। नष सष पवनां शेलैं नव षंड।।

आत्मबोध-2

जड़ी बूटी भूलै मति कोइ। पहली रांड बेद की होइ।।
जड़ी बूटी अमर जे करें तो बेद धनन्तर काहे मरै।।
सोने रूपै सीझे काज। तो कत राजा छांड़ै राज।।
पसुवा होइ जपै नहिं जाप। सो पसुवा मोषि क्यूं आप।।
रिधि सकेलै रोलांणी धरै। गुरु न षोजै मुरिष मरै।।
रौलाणीं आगे बेसे फूलि। गुरु की बाचा गया जे भूलि।।
अकल पुरिस के सकल नियाव। मीठा बोलै झूठा भाव।।
सत बोलै सोई सतबादी। झूठ बोलै सो महापापी।।
देषत भौंदू विषिया षाई। झूठा बोलैं मरि-मरि जाई।।
जैसा करै सो तेसा पाय। यकोतर से पुरिषा नरकि लै जाय।।
एक पुरिष बहुं भांति नारी। सरब निरन्तर आत्मां सारी।।
सरब निरन्तर भरि पूरि रहितया। आत्माबोध सपूरण कहिया।।
पाप न पुन्ने लिपे न काया। आत्माबोध कथंत श्रीगोरष राया।।

ग्यान-चौतीसा

आदिनाथादि पारब्रह्म ऊँसिव ससकती। नाद-बिन्द ले काया उतपती।
नाद-बिंद रूपी बोलिए ऊँकार।
बिंदरूपी बोलिए काया। प्रामि आदि उत्पती माया।।
उदै भईला सूर अस्त भईला चंदा। दुहु बिच कलपना काल का फंदा।
उदै ग्रह अस्त एक करि बासा। तब जानबा जोगींद्र जीवन आसा।
बारह कला रवि सोलह कला ससी। चारि कला गुरुदेव निरंतर बसी।
हीण पद सुराया लागा डंसा। तन का तेज ले उड़िया हंसा।
हंस का तेल लै थिर रहै काया। काल का भेद कहौ गुर राया।
द्वैपश छेदि एक ह्वै रहणां। चंद सूर दोउ सम करि गहणां।
ऊँच भै उतरे मध्य निरंतरै ता तलि भाठि जराई।

सीजि अमीरस कंचन हुआ। यदि बिधि पिंजरै बानबै सुआ।
उपजंत दीसंत निपजंत नाहीं आबरण नास्ति संसार माहीं।
बुझि लै सतगुर बुद्धि भेद सिद्ध संकेत। परचा जाणि लगावो हेत।
उरम धूरम जोती झाला। नौ कोटि शिड़की पूर ले ताला।
ताला न टूटै षिड़की न भाजै। पिंड पाडै तौ सतगुरु लाजै।
भरे सागर धुनि धूसर कूंची। तहाँ सकल विध है सोई सूची।
इहि बिधि जोगी अतीत होई। अमर पद ध्यावत बिरला कोई।
सहज मरे अष्ट पग धरणां। ग्यान खड़ग ले काल संहरणां।
अमर कोट काया एक ब्रह्म मध्ये। जीत ले जमपुरी राशि ले कंधे।
आतमा झूझ जती गोरषनाथ किया। संसार बिणास्या आपणा जिया।
या रहनी में घर घर बासा, जोग जुगति करि पाया।
सिध समाधि पंच घर मेला, गोरश तहां समाया।।
हाली भीतरि शेंत निदांणै, बगु मैं ताल समाई।
बरषै मोर कुहूकै सावण, नदी अपूठी आई।।
गऊ पद मांही पहौकर फदकै, दादर भर्य झिलारै।
चात्रिग मैं चौमांसी बोलै, ऐसा समा हमारै।
आसा तृष्णां थिर ह्वै बैठी, पदपरचे सुष पाया।
सुकैं तरवर कूंपल मेल्ही, यदि बिधि निपजी काया।

परिशिष्ट-एक

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. गोरखबानी : राम लाल श्रीवास्तव / प्रकाशक : गोरख मंदिर, गोरखपुर।
2. गोरखनाथ और नाथ सिद्ध : डॉ. अनुज प्रताप सिंह/ प्रकाशक : गोरख मंदिर, गोरखपुर।
3. ऋक सूक्त संग्रह : डॉ. हरिदत्त शास्त्री / प्रकाशक : साहित्य भंडार, मेरठ।
4. भगवद्गीता (अंग्रेज़ी अनुवाद) प्रकाशक : गीता प्रेस, गोरखपुर।
5. नाथ सम्प्रदाय : हजारी प्रसाद द्विवेदी/ प्रकाशक : लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
6. हिन्दी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल /
प्रकाशक : लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
7. नाथ सम्प्रदाय : इतिहास एवं दर्शन : योगी हुकुम सिंह तंवर/
प्रकाशक : राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर।
8. योगवाणी, मई 2017 / प्रकाशक : गीता प्रेस, गोरखपुर।
9. कबीर : हजारी प्रसाद द्विवेदी/ प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन।
10. रामचरितमानस : तुलसीदास / प्रकाशक : गीता प्रेस, गोरखपुर।
11. भारतीय दर्शन : डॉ. नन्द किशोर देवराज/ प्रकाशक : उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान।
12. पतंजलि योग सूत्र : स्वामी विवेकानन्द (अंग्रेजी भाष्य)
प्रकाशक : विजय गोयल, नवीन शहादरा, दिल्ली।
13. जायसी ग्रन्थावली : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल/ प्रकाशन : वाणी प्रकाशन, दिल्ली।
14. फिलासिफी ऑफ गोरखनाथ : लेखक ए. के. बनर्जी/
प्रकाशक : गीता प्रेस, गोरखपुर।
15. नाथपंथ : गढ़वाल के परिप्रेक्ष्य में : विष्णुदत्त कुकरेती
प्रकाशक : गोरखनाथ मंदिर, गोरखपुर।
16. राजयोग - स्वरूप एवं साधना : महन्त योगी आदित्यनाथ
प्रकाशक : गोरखनाथ मंदिर, गोरखपुर।
17. हठ योग - स्वरूप एवं साधना : महन्त योगी आदित्यनाथ
प्रकाशक : गोरखनाथ मंदिर, गोरखपुर।
18. गोरख सिद्धान्त संग्रह : राम लाल श्रीवास्तव / प्रकाशक : गोरखनाथ मंदिर, गोरखपुर।
19. हठयोग प्रदीपिका : राम लाल श्रीवास्तव/ प्रकाशक : गोरखनाथ मंदिर, गोरखपुर।

परिशिष्ट– 2 : समीक्षा

हिन्दी साहित्येतिहास लेखन की परम्परा में कदाचित नाथपंथी साधकों की विस्तृत चर्चा नहीं मिलती है, किन्तु इन साधकों का साहित्यिक और सामाजिक अवदान कमतर नहीं है। मानवीय मूल्यों की स्थापना एवं साम्प्रदायिक सौहार्द स्थापित करने में योगमार्ग का उल्लेखनीय योगदान रहा है। इन साधकों को योगी, औघड़, अवधूत, सिद्ध आदि से अभिहित किया गया है। आदिनाथ शिव द्वारा प्राप्त ज्ञान को मत्स्येन्द्रनाथ (मछंदरनाथ) ने अपने शिष्य गोरक्षनाथ (गोरखनाथ) को प्रदान किया। गोरखनाथ ने हठयोग जैसी क्लिष्ट कायिक साधना को सर्वसुलभ और सर्वस्वीकार्य बनाया। गोरखनाथ का हठयोग अष्टांग योग से अधिक सरल, सहज और व्यावहारिक है। यही कारण है कि उनके द्वारा प्रवर्तित साधना 'सर्वजनहिताय' बन सकी। उन्होंने भोगवादी पंचमकारी साधना के विरुद्ध ब्रह्मचर्ययुक्त व्यवहारिक योग साधना पर बल दिया।

डॉ. पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल ने नाथ साधना का गहन अध्ययन विश्लेषण करते हुए 40 पुस्तकों की सूची प्रस्तुत की, जिनमें से 14 को प्राचीन एवं असंदिग्ध मानते हुए गोरखनाथ को नाथपंथ का महान योगी सिद्ध किया। 'गोरख जगायो जोग' नामक यह पुस्तक गोरखनाथ द्वारा प्रतिष्ठित हठयोग साधना को न केवल स्थापित करती है अपितु उसे सर्वस्वीकार्य भी बनाती है।

गोरखनाथ संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे, जो उनके ग्रंथों से प्रमाणित है, किन्तु 'सबदी' जैसी उनकी हिन्दी रचना कहीं से भी क्लिष्ट नहीं है। एक उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाती है।

हिन्दू ध्यावै देहुरा, मुसलमान मसीत।
योगी ध्यावै परमपद, जहां देहुरा न मसीत।

यह भाषा जन में प्रचलित हिन्दी के अत्यंत निकट है। हिन्दी की प्रसिद्ध बोली अवधी का प्रभाव भी उनके काव्य पर देखा जा सकता है, जिसके कारण उनके विचारों की स्वीकार्यकता निश्चित रूप से बड़े समुदाय में बढ़ी है-

हसिबा खेलिबा धरिबा ध्यान।
अहनिसि करिबा ब्रह्मग्यान।

भाषा की यह सहजता और सरसता गोरखनाथ को लोकप्रिय बनाती है। गोरखनाथ ने हठयोग जैसी क्लिष्ट कायिक साधना को सरल बनाया, जो अत्यंत दुरूह हो चली थी।

हठयोग को ह (सूर्य- इड़ा नाड़ी) तथा ठ (चंद्रपिंगल नाड़ी) का प्रतीक बताते हुए सुषुम्ना एवं कुंडलिनी आदि की चर्चा की। उन्होंने कुण्डलिनी जागरण द्वारा परमपद में लीन होने का स्वाभाविक वर्णन अपने काव्य में किया है। साधना प्रक्रिया में कुण्डलिनी

को मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मार्गपूर, अनहद, विशुद्धाख्य, आज्ञा चक्रों को भेदकर सहस्त्रार में स्थापित करने पर 'अनहद नाद' सुनाई देता है। शून्य चक्र अथवा गगन मंडल का भावपूर्ण चित्रण द्रष्टव्य है :

गगन मण्डल में ऊंधा कुंवा
तहां अमृत का वास।
सगुरा होई सू भरि-भरि पीवै,
निगुरा जाइ पियास।

गोरखनाथ द्वारा प्रतिष्ठित योगमार्ग की स्वीकार्यता का अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि परवर्ती संत साहित्य के साथ सगुण साधना पद्धति पर भी इसका प्रभाव देखा जा सकता है। कबीर, रैदास, मीरा, तुलसी, जायसी आदि की कतिपय रचनाओं में इसका प्रभाव देखा जा सकता है। कबीर के काव्य पर योग साधना का व्यापक प्रभाव है। कबीर ने योगमार्ग के लिए गोरखनाथ का सम्मानपूर्ण स्मरण किया है :

साखी गोरखनाथ ज्यूं
अमर भई कलि मांह।।

गोरखनाथ के हठयोग का प्रभाव जायसी के 'पद्मावत' पर भी पड़ा है। उन्होंने गोरखनाथ को स्मरण करते हुए लिखा :

जोगी सिद्ध होई तब
जब गोरख सो भेंट।।

गोरखनाथ द्वारा प्रयुक्त जनभाषा हिन्दी का मूल्यांकन करते हुए स्पष्ट होता है कि उनकी हिन्दी में प्रचलित लोकभाषा के शब्दों के साथ अवधी की भी बहुलता है। कदाचित इसी कारण उसकी स्वीकार्यता बढ़ी है। गोरखनाथ ने योग साधना द्वारा संयमित जीवन, विकार रहित देह की प्राप्ति, नादावस्था में दिव्यता की अनुभूति, लोकानुभव, अनुशासन पर बल दिया है। इस पुस्तक के लेखक राम सागर शुक्ल को कोटिशः बधाई, जिन्होंने गोरखनाथ के सम्पूर्ण साहित्यिक अवदान एवं सामाजिक प्रदेय को गंभीरतापूर्वक प्रस्तुत किया है। निश्चित ही इस पुस्तक का साहित्य जगत में स्वागत होगा और हिन्दी की सुदीर्घ परम्परा में गोरखनाथ के सार्थक हस्तक्षेप से पाठकगण परिचित हो सकेंगे।

डॉ. फहीम अहमद
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी
मुमताज पी.जी. कॉलेज, लखनऊ
मो. नं.– 8896340824

परिशिष्ट–3

अरिन्दमोपाख्यान

अमोघवज्र ने आँखें खोली।

सामने गुरु गोरखनाथ को देखकर अचकचा कर उठ खड़े हो गये। गोरखनाथ के तेजोमय मुख मण्डल पर आनन्द की छटा छिटक रही थी। उन्होंने स्नेहभरी दृष्टि अमोघ वज्र पर डाली और हँसते हुए कहा, 'अमोघ'! अब भी तुम सिद्धियों के मायाजाल में उलझे हुए हो। हमारी आँखों के सामने आक्रमणकारियों ने मन्दिरों, मठों, स्तूपों और ग्रन्थागारों को जला दिया और हमारी सिद्धियाँ किसी काम नहीं आयीं। अब कर्म करने की आवश्यकता है।

अमोघ वज्र की आँखों में आँसू छलक आये, इस बीच उन्होंने देखा कि गुरु गोरखनाथ धीरे-धीरे प्रभा मण्डल के साथ ऊपर उठते हुए आकाश में विलीन हो गये। कुछ देर ध्यानमग्न रहने के बाद अमोघ वज्र ने कहा– अवधू, गोरखनाथ अमर और अजन्मा है। जिसने जन्म नहीं लिया, वह मर भी नहीं सकता है। गोरख हमारे गुरु भाई हैं। वह सर्वत्र विद्यमान हैं। वह जब भी चाहते हैं किसी से भी किसी को माध्यम बनाकर अपना उद्देश्य पूरा कर लेते हैं। मुझसे भी उन्हें यही आशा की है। हाल ही में उन्होंने एक सामान्य साहित्यकार से एक पुस्तक की रचना करवा डाली। इस सम्बन्ध में रचनाकार ने इस प्रकार बताया- 'मेरे हाथ में गोरखवाणी पत्रिका की एक प्रति थी। उसके मुख पृष्ठ पर गोरखनाथ का चित्र छपा था। मैं पत्रिका पढ़ रहा था। इसी बीच चार वर्ष का एक बालक मेरे पास आया। उसने पत्रिका मेरे हाथ में देखकर मुझसे कहा, इस पुस्तक को पूरा पढ़ डालो। मैंने हाँ कर ली और उसे हँसा दिया। दो-तीन दिन बाद वह बालक पुनः मेरे पास आया और पूछने लगा, वह पुस्तक कहाँ है, जिसे पढ़ने के लिए मैंने तुमसे कहा था। पत्रिका मेरे पास न देखकर वह किताबों की ढेर से उसे ढूँढ़कर लाया। बच्चे ने उलाहना देते हुए कहा कि बाबा तुम बहुत आलसी हो, मैं फिर कहता हूँ कि इसे पूरा पढ़ डालो। मैं तुम्हें नम्बर दूँगा।

मैं घबड़ा गया। अबोध बच्चा यह पुस्तक पढ़ने के लिए क्यों मुझसे बार-बार कह रहा है। फिर मुझे लगा कि कोई अज्ञात शक्ति चाहती है कि मैं पत्रिका पढ़कर गुरु गोरखनाथ के बारे में कुछ लिखूं। फिर मैं काम में लग गया और यह पुस्तक कुछ ही दिनों में तैयार हो गयी।

आज मुझे लगता है कि मैं ऐसी पुस्तक स्वयं नहीं लिख सकता हूँ। मुझे पूरा विश्वास है कि इस पुस्तक की रचना दैवी कृपा से हुई है। मैं संतुष्ट हूँ और वह बच्चा भी खुश है। आप पूछेंगे, वह बालक कौन है? मेरा उत्तर है- वही अजितसुत-अरिन्दम-मेरा पोता और कौन...।

ॐ नमः गोरखनाथाय
अवधू ईश्वर हमारे चेला
भणिजै, मछीन्द्र बोलिये नाती
निगुरी पिरथी परलै जाती
तामै हम उनकी थापना थापी।
बसती न सून्यं, सून्यं न बसती
अगम अगोचर ऐसा।
गगन शिखर महि बालक बोलै,
ताका नाँव धरहुगे कैसा...